1.7

कला, संगीत, नृत्य और रंगमंच

राष्ट्रीय फोकस समूह

का

आधार पत्र

राष्ट्रीय शैक्षिक अनुसंधान और प्रशिक्षण परिषद्
NATIONAL COUNCIL OF EDUCATIONAL RESEARCH AND TRAINING

ISBN 978-81-7450-970-3

प्रथम संस्करण
जून 2009 आषाढ़ 1931

PD 3T NSY

© राष्ट्रीय शैक्षिक अनुसंधान और प्रशिक्षण परिषद्, 2009

रु 25.00

सर्वाधिकार सुरक्षित

- प्रकाशक की पूर्व अनुमति के बिना इस प्रकाशन के किसी भाग को छापना तथा इलैक्ट्रॉनिकी, मशीनी, फोटोप्रतिलिपि, रिकॉर्डिंग अथवा किसी अन्य विधि से पुनः प्रयोग पद्धति द्वारा उसका संग्रहण अथवा प्रसारण वर्जित है।
- इस पुस्तक की बिक्री इस शर्त के साथ की गई है कि प्रकाशक की पूर्व अनुमति के बिना यह पुस्तक अपने मूल आवरण अथवा जिल्द के अलावा किसी अन्य प्रकार से व्यापार द्वारा उधारी पर, पुनर्विक्रय या किराए पर न दी जाएगी, न बेची जाएगी।
- इस प्रकाशन का सही मूल्य इस पृष्ठ पर मुद्रित है। रबड़ की मुहर अथवा चिपकाई गई पर्ची (स्टिकर) या किसी अन्य विधि द्वारा अंकित कोई भी संशोधित मूल्य गलत है तथा मान्य नहीं होगा।

एन सी ई आर टी के प्रकाशन विभाग के कार्यालय

एन.सी.ई.आर.टी. कैंपस
श्री अरविंद मार्ग
नयी दिल्ली 110 016 फोन : 011-26562708

108, 100 फीट रोड
होस्डेकेरे हेली एक्सटेंशन
बनाशंकरी III स्टेज
बेंगलुरु 560 085 फोन : 080-26725740

नवजीवन ट्रस्ट भवन
डाकघर नवजीवन
अहमदाबाद 380 014 फोन : 079-27541446

सी.डब्ल्यू.सी. कैंपस
निकट: धनकल बस स्टॉप पनिहटी
कोलकाता 700 114 फोन : 033-25530454

सी.डब्ल्यू.सी. कॉम्प्लैक्स
मालीगांव
गुवाहाटी 781021 फोन : 0361-2674869

प्रकाशन सहयोग

अध्यक्ष, प्रकाशन विभाग : *पेय्यटि राजाकुमार*
मुख्य उत्पादन अधिकारी : *शिव कुमार*
मुख्य संपादक : *श्वेता उप्पल*
मुख्य व्यापार प्रबंधक : *गौतम गांगुली*
संपादक : *नरेश यादव*
उत्पादन : *अरुण चितकारा*

सज्जा एवं आवरण
श्वेता राव

प्रकाशन विभाग में सचिव, राष्ट्रीय शैक्षिक अनुसंधान और प्रशिक्षण परिषद्, श्री अरविंद मार्ग, नयी दिल्ली 110 016 द्वारा प्रकाशित तथा बंगाल ऑफसैट वर्क्स, 335, खजूर रोड, करोलबाग, नयी दिल्ली 110 005 द्वारा मुद्रित।

सार-संक्षेप

यदि हमें अपनी विशिष्ट सांस्कृतिक पहचान को सभी विविधताओं और समृद्धि के साथ सुरक्षित रखना है तो कला शिक्षा को हमारे विद्यार्थियों की औपचारिक शिक्षा में एकीकृत करने की जरूरत पर अविलंब ध्यान देने की आवश्यकता है। पिछले कई दशकों में कलाओं को विद्यालयी शिक्षा व्यवस्था में समाकलित करने की आवश्यकता पर विचार-विमर्श, बहस तथा अनुशंसाएँ की जा चुकी हैं और आज भी हम वक्त के उस मोड़ पर खड़े हैं जब हम अपनी विशिष्ट सांस्कृतिक पहचान को खो देने के खतरे से रू-ब-रू हैं। इसका एक प्रमुख कारण आम तौर पर लोगों और कलाओं के बीच बढ़ रही दूरी है। कलाओं का अनुसरण करने के लिए उत्साहित करने के स्थान पर हमारी शिक्षा व्यवस्था ने विद्यार्थियों और रचनात्मक प्रतिभाओं को लगातार निरुत्साहित किया है या अधिक से अधिक उन्हें कला को 'उपयोगी रुचियों' और 'फुरसत के क्षणों के क्रियाकलाप', स्वतंत्रता दिवस, स्थापना दिवस, वार्षिक दिवस या विद्यालय के प्रगति एवं कार्य निरीक्षण आदि जैसे अवसरों पर विद्यालय की प्रतिष्ठा बढ़ाने का उपकरण बना दिया है। उसके पहले या बाद में बच्चे के विद्यालयी जीवन के अधिकतर भाग में कलाओं का परित्याग कर दिया जाता है और विद्यार्थियों को उन विषयों की ओर हाँक दिया जाता है, जो ज़्यादा महत्वपूर्ण समझे जाते हैं।

कला के प्रति सामान्य जागरूकता न केवल विद्यार्थियों के बीच बल्कि उनके अभिभावकों, शिक्षकों और यहाँ तक कि नीति-निर्माताओं तथा शिक्षाविदों के बीच भी लगातार घट रही है। एक बच्चे के विद्यालयी जीवन के दौरान हरेक विद्यार्थी को इतिहास, साहित्य, विज्ञान आदि जैसे विषयों की शिक्षा दी जाती है और तब वे यह चुनने के योग्य बनते हैं कि या तो वे मानविकी, विज्ञान या फिर वाणिज्य जैसे शिक्षा के क्षेत्रों में विशेषज्ञता प्राप्त कर सकें। अगर बच्चे को कला की अभिव्यक्ति का कोई अवसर नहीं दिया जाता है तो हम बच्चे को उच्च माध्यमिक स्तर पर कला अध्ययन का कोई विकल्प नहीं दे रहे हैं।

वर्तमान परिप्रेक्ष्य में कला के प्रति हमारी धारणा कला के नाम पर हम जो अपने आसपास देखते या सुनते हैं, उससे उत्पन्न होती है। हमारे युवावर्ग पर बॉलीवुड के अश्लील दृश्य, गाने और उत्तेजित करने वाले वीडियो और यहाँ तक कि खुली हिंसा या विद्वेष लगातार हावी होते जा रहे हैं। विद्यालयों में कला का अभिप्राय मिकी माउस या डोनाल्ड डक जैसे कार्टून चरित्रों के चित्रांकन तक सीमित माना जाता है और रंगमंच टेलीविज़न धारावाहिकों का पुनः प्रदर्शन हो जाता है। यहाँ तक कि विद्यालय और उसके अधिकारी इस तरह की कला को प्रोत्साहित करते हैं और वैसे कार्यक्रमों के मंचन में गर्व महसूस करते हैं जिनमें अभद्रता की सीमा छूनेवाले गाने तथा नृत्य और नाटकों का प्रदर्शन होता है। भारत में कलाओं की समृद्धि और विविधता के संबंध में अज्ञान और जागरूकता की कमी के इस माहौल में, हम कला के महत्त्व की और ज़्यादा उपेक्षा नहीं कर सकते और इसके पहले कि हम इस दु:खद अनुभूति तक पहुँचें कि हम एक सांस्कृतिक रूप से अशिक्षित समाज हैं, हमें अपनी सभी संभव शक्ति और संसाधन देश के विद्यार्थियों के बीच सांस्कृतिक और कलात्मक जागरूकता का निर्माण करने की तरफ अवश्य केंद्रित करने चाहिए।

भारत में कलाएँ धर्मनिरपेक्षता और सांस्कृतिक विविधता का भी जीवंत उदाहरण हैं जिसकी समझ हमारे युवाओं को कलात्मक परंपराओं की समृद्धि और विविधता को बढ़ावा देने की योग्यता प्रदान करेगी, साथ ही उन्हें उदार, रचनात्मक चिंतक और राष्ट्र का अच्छा नागरिक बनाएगी। कलाएँ हमारे युवा नागरिकों को न केवल उनके विद्यालयी जीवन में अपितु जीवनपर्यन्त समृद्ध करेंगी।

विगत कुछ समय में इस फोकस समूह की चर्चाओं के दौरान हमने कला शिक्षा को किसी अन्य दूसरे विषयों के समान विद्यालयी पाठ्यचर्या का अभिन्न एवं आवश्यक अंग बनाने की अनुशंसाओं पर निम्नलिखित विस्तृत प्रतिक्रियाएँ प्राप्त कीं जिन पर हमने आगे विचार किया:

- वास्तव में कला को एक अतिरिक्त पाठ्यचर्यी गतिविधि के रूप में शिक्षण का एक महत्त्वपूर्ण हिस्सा बनाए जाने का कोई विरोध नहीं है परंतु अन्य विषयों जैसे गणित, भूगोल, इतिहास इत्यादि के समान कला शिक्षा को भी प्रत्येक विद्यार्थी के लिए पाठ्यक्रम का एक अहम हिस्सा बनाने में संशय एवं विरोध की संभावनाएँ हैं।
- बहुतों का कहना है कि यदि संगीत, नृत्य, कला और रंगमंच विद्यालयी पाठ्यचर्या का हिस्सा बना दिए जाएँ तो 'सीखने का आनंद' समाप्त हो जाएगा।
- एक दूसरा मत यह है कि कलाएँ बच्चे के व्यक्तित्व विकास के लिए महत्त्वपूर्ण हैं, लेकिन इनको विद्यालयों में नहीं रखना चाहिए। जिनकी कला के प्रति अभिरुचि है, उसका अनुसरण वे विद्यालय व्यवस्था के बाहर और अपनी स्वतंत्र इच्छा से करें।

कला शिक्षा को विद्यालयी पाठ्यचर्या में जोड़ने की बार-बार अनुशंसाएँ की गई हैं परंतु उसे अभी तक लागू नहीं किया गया है और अगर हम कला को केवल अतिरिक्त गतिविधि या दूसरे विषयों को सिखाने के माध्यम के रूप में पाठ्यचर्या में शामिल करने की बात करते रहे तो यह कलात्मक और सांस्कृतिक विनाश के मार्ग की ओर अग्रसर होने के समान होगा। यदि कला शिक्षा को विद्यालयी पाठ्यचर्या में नहीं शामिल किया जाता है तो यह खाली समय में मात्र एक मनोरंजन की गतिविधि ही बनी रहेगी और विद्यार्थी देश की रचनात्मक कलाओं की समृद्ध परंपराओं एवं उनकी जीवंत प्रकृति की विविधता के प्रति जागरूक नहीं होंगे तथा विभिन्न अवसरों पर निम्नस्तरीय गीत एवं नृत्य को सीखना जारी रखेंगे।

यह समूह कला शिक्षा को पाठ्यचर्या की मुख्यधारा में एक विषय के रूप में शामिल करने पर सामने आनेवाली चुनौतियों को महसूस करता है और निम्नलिखित अनुशंसाओं को इस विचाराधिकार के साथ पेश करता है कि ये केवल ऐसा सुनिश्चित करने की तरफ पहला कदम है कि भारत अपनी कलात्मक परंपरा का सम्मान, संरक्षण और संचरण करने वाला एक देश हो सकता है और होगा। यह एक ऐसी प्रक्रिया है जिसका भविष्य में संवर्धन होगा और विभिन्न संसाधनों की सहायता से ये आगे बढ़ेगी।

फोकस समूह द्वारा निम्नलिखित अनुशंसाओं पर बल दिया गया है:

- कला शिक्षा प्रत्येक विद्यालय में दसवीं कक्षा तक अनिवार्य विषय के रूप में दी जानी चाहिए। प्रत्येक विद्यालय में इसके लिए सुविधाएँ प्रदान की जानी चाहिए। संगीत, नृत्य, नाट्य एवं दृश्य कलाएँ, ये चार विधाएँ कला शिक्षा के अंतर्गत पढ़ाई जानी चाहिए। पारंपरिक भारतीय कलाओं पर विशेष बल दिया जाना चाहिए जिनकी जगह आज प्रचलित कलाओं ने ले रखी है जो पारंपरिक भारतीय कलाओं को पीछे धकेल रही हैं।
- शिक्षकों द्वारा कला शिक्षा को पाठ्यचर्या में अच्छी तरह एवं सृजनात्मकता से सम्मिलित करने के लिए शिक्षक-प्रशिक्षण में कला तत्वों को शामिल किया जाना चाहिए।
- वस्तुत: विद्यालयी प्रशासन द्वारा कला को पाठ्यचर्या में महत्त्व दिया जाना चाहिए और इसे मात्र एक मनोरंजन का माध्यम एवं प्रतिष्ठा प्राप्त करने की गतिविधि नहीं समझना चाहिए। उनके द्वारा विद्यार्थियों को कलात्मक कार्यों के प्रति प्रोत्साहित किया जाना चाहिए।

- विभिन्न संस्थाओं द्वारा कला शिक्षा को एक विषय के रूप में पढ़ाए जाने के लिए जन-चेतना जाग्रत करने की आवश्यकता है। बच्चों के संवर्धन एवं विकास में कला के महत्त्व के प्रति अभिभावकों, विद्यालयी प्रशासन यहाँ तक कि नीति-निर्धारकों में भी चेतना जाग्रत करने की आवश्यकता है।
- कला में शिक्षण से ज़्यादा अधिगम अथवा सीखने पर बल दिया जाना चाहिए एवं शिक्षकों द्वारा निर्देश देने के स्थान पर पारस्परिक सहयोग एवं प्रतिभागिता की नीति अपनानी चाहिए।
- कला शिक्षा में शोध, विकास एवं प्रशिक्षण के लिए संसाधन की व्यवस्था आवश्यक है। कला शिक्षकों के लिए इलेक्ट्रॉनिक मीडिया सहित अधिकाधिक सामग्री उपलब्ध कराई जानी चाहिए।
- समूह के द्वारा कला की विभिन्न विधाओं में शिक्षकों तथा राज्यों को सशक्त करने एवं सामग्री के विकास हेतु राष्ट्रीय शैक्षिक अनुसंधान और प्रशिक्षण परिषद् में कला शिक्षा की एक इकाई स्थापित करने की अनुशंसा भी की गई जहाँ कला के विभिन्न क्षेत्रों के प्रतिनिधि संकाय सदस्य हों।

'कला, संगीत, नृत्य और रंगमंच' के
राष्ट्रीय फोकस समूह के
सदस्यों के नाम

श्रीमती शुभा मुद्गल (अध्यक्षा)
39 बी, एम.आई.जी. फ्लैट्स
मोतिया खान, पहाड़गंज
नई दिल्ली-110 055
अथवा
4, गणेश भवन, 11वाँ मार्ग
खार (पश्चिम), मुंबई-400 052 (महाराष्ट्र)

सदस्य

श्री फैज़ल अलकाज़ी
एस-268, ग्रेटर कैलाश-II
नई दिल्ली-110 048

सुश्री माया राव
ए-30, फ्रैंड्स कालोनी (पूर्व)
नई दिल्ली-110 065

डॉ. प्रभजोत कुलकर्णी
प्रधानाचार्य
महर्षि वाल्मिकी कॉलेज ऑफ एजुकेशन
गीता कालोनी, दिल्ली-110 092

प्रो. भूलेश्वर माटे
डीन, स्कूल ऑफ ह्यूमिनिटीज़
डिपार्टमेंट ऑफ फाईन आर्ट्स
असम यूनिवर्सिटी, दुर्गाकोना
सिलचर-788 011 (असम)

प्रो. सुनीरा कासलीवाल
रीडर, फैकल्टी ऑफ म्यूजिक
दिल्ली विश्वविद्यालय
दिल्ली-110 007

प्रो. सी.वी. चंद्रशेखर
ई-51, फोर्ट इन्द्रप्रस्थ, 45, कलाक्षेत्र रोड
थिरूवनम्यूर, चेन्नई-600 041 (तमिलनाडु)

प्रो. गुलाम मोहम्मद शेख
बी-7, निहारिका बंगला
प्रतापगंज, वडोदरा-390 002 (गुजरात)

श्री ई.ए. रशीद
प्रधानाचार्य, गवर्मेंट राजा रवि वर्मा कॉलेज
ऑफ फाईन आर्ट्स, मावेलीकारा
अलापुज़ा-690 101 (केरल)

सुश्री प्रेरणा श्रीमाली
सी-7, ग्राउंड फ्लोर, दिल्ली पुलिस अपार्टमेंट्स
मयूर विहार, फेस-1, दिल्ली-110 091

प्रो. मनीषा पी. पाटील
एफ-3, साई विश्व अपार्टमेंट्स, 6, नवाब लेआउट
तिलक नगर, नागपुर-440 010 (महाराष्ट्र)

सुश्री रति बासु
शिक्षिका, पाठ भवन, विश्व भारती
शांतिनिकेतन-731 235 (पश्चिम बंगाल)

श्री अशोक रानाडे
7, ज्ञान देवी, साहित्य सहवास
कला नगर, केलकर मार्ग
मुंबई-400 051 (महाराष्ट्र)

डॉ. सुनील कुमार
रीडर, प्रारम्भिक शिक्षा विभाग
राष्ट्रीय शैक्षिक अनुसंधान और प्रशिक्षण परिषद्
श्री अरविंद मार्ग, नई दिल्ली-110 016

डॉ. ज्योत्स्ना तिवारी (सदस्य सचिव)
प्रवक्ता (कला शिक्षा), सामाजिक विज्ञान एवं
मानविकी शिक्षा विभाग, राष्ट्रीय शैक्षिक अनुसंधान
और प्रशिक्षण परिषद्, श्री अरविंद मार्ग
नई दिल्ली-110 016

आमंत्रित सदस्य

डॉ. आशीष घोष
श्री गिरीश जोशी
डॉ. पवन सुधीर
डॉ. आशा सिंह
डॉ. त्रिपुरारि शर्मा
श्री सुवर्ण रावत
सुश्री अमृता लाल
सुश्री प्रीति भटनागर
सुश्री संजू जैन
डॉ. सुचिता राऊत
डॉ. सुषमा श्रीवास्तव
श्रीमती नीला सरकार
सुश्री जयलक्ष्मी ईश्वर
सुश्री गीता चन्द्रन
श्री केवल अरोड़ा
सुश्री मलोयश्री हाशमी

अनुवाद सहयोग

श्री अजय कुमार सिंह, 6/54, विजय नगर, डबल स्टोरी, दिल्ली-110 009

श्री अनिल चमड़िया, सी 251, सेक्टर 19, रोहिणी, दिल्ली-110 085

डॉ. फ़रहत रिज़वी, राष्ट्रीय सहारा इंडिया कॉम्पलेक्स, सहारा समय वीकली, सी-1234, सेक्टर-11, नोएडा (उ.प्र.)

डॉ. ज्योत्सना तिवारी, *प्रवक्ता* (कला शिक्षा), सामाजिक विज्ञान एवं मानविकी शिक्षा विभाग, एन.सी.ई.आर.टी., श्री अरविंद मार्ग, नई दिल्ली-110 016

डॉ. शंकर शरण, *प्रवक्ता*, डी.ई.आर.पी.पी., एन.सी.ई.आर.टी., श्री अरविंद मार्ग, नई दिल्ली-110 016

श्री मनोज मोहन, पी.डी. 64/सी, पीतमपुरा, दिल्ली-110 088

डॉ. राधा, सेक्टर 4/276, चिरंजीव विहार, गाज़ियाबाद-201 002

डॉ. रंजना अरोडा, *प्रवाचक*, पाठ्यचर्या समूह, एन.सी.ई.आर.टी., श्री अरविंद मार्ग, नई दिल्ली-110 016

विषय सूची

सार संक्षेप ...iii
राष्ट्रीय फोकस समूह के कला, संगीत, नृत्य और रंगमंच के सदस्यों के नाम ...vi

1. विद्यालयों में कला शिक्षा–एक अवलोकन ...1

2. कला शिक्षा में शिक्षण-अधिगम तथा मूल्यांकन की वर्तमान स्थिति ...3

3. कला शिक्षा के उद्देश्य : भविष्य की संकल्पना ...4

3.1 पूर्व-प्राथमिक स्तर ...5

3.2 प्राथमिक स्तर ...6

3.3 उच्च प्राथमिक स्तर ...6

3.4 माध्यमिक स्तर ...6

3.5 उच्चतर माध्यमिक स्तर ...7

4. कला शिक्षा और विद्यालयी पाठ्यक्रम में इसका समन्वयन ...7

4.1 कलाओं के माध्यम से अधिगम कला का शिक्षा में समन्वय (स्तरवार) ...9

5. कला शिक्षा की पाठ्यचर्या ...9

5.1 पूर्व-प्राथमिक स्तर ...9

5.2 प्राथमिक स्तर ...11

6. दृश्य कलाओं की पाठ्यचर्या ...13

6.1 उच्च प्राथमिक स्तर ...13

6.2 माध्यमिक स्तर ...15

6.3 उच्चतर माध्यमिक स्तर ...18

7. प्रदर्शनकारी कलाओं की पाठ्यचर्या ...19

7.1 नाटक ...19

7.1.1 उच्च प्राथमिक स्तर ...20

7.1.2 माध्यमिक स्तर ...21

7.1.3 उच्चतर माध्यमिक स्तर ...23

7.2 संगीत ...25

7.2.1 उच्च प्राथमिक स्तर ...25

7.2.2 माध्यमिक स्तर ...25

7.2.3 उच्चतर माध्यमिक स्तर ...26

7.3 नृत्य ...26
7.3.1 उच्च प्राथमिक स्तर ...27
7.3.2 माध्यमिक स्तर ...27
7.3.3 उच्चतर माध्यमिक स्तर ...28
7.4 समय का निर्धारण ...28
7.4.1 पूर्व प्राथमिक स्तर ...28
7.4.2 प्राथमिक एवं उच्च प्राथमिक स्तर ...28
7.4.3 माध्यमिक स्तर ...28
7.4.4 उच्चतर माध्यमिक स्तर ...29
8. कला शिक्षा में मूल्यांकन ...29
8.1 पूर्व प्राथमिक स्तर ...29
8.2 प्राथमिक स्तर ...29
8.3 उच्च प्राथमिक स्तर ...29
8.4 माध्यमिक स्तर ...30
8.5 उच्चतर माध्यमिक स्तर ...30
9. भारत में कला शिक्षा और शिक्षक-शिक्षा ...30
10. कार्यान्वयन के तरीके ...34
11. कला शिक्षा के शिक्षकों एवं विद्यालय के लिए संसाधन सामग्री ...36
संदर्भ ...38

1. विद्यालयों में कला शिक्षा–एक अवलोकन

मध्यस्थता और सृजनात्मकता की हर जगह कमी है, विशेषकर विद्यालयों में। हमारे जीवन से कला विलुप्त हो रही है और हम हिंसा का मार्ग प्रशस्त कर रहे हैं।

–यहूदी मेनुहिन

स्वतंत्रता प्राप्ति के समय से ही विभिन्न शासकीय प्रपत्रों में विद्यार्थियों के संपूर्ण विकास के लिए कला शिक्षा को एक अत्यधिक महत्वपूर्ण क्षेत्र के रूप में इंगित किया गया है। जैसे कि 1952-53 के शिक्षा आयोग के प्रतिवेदन में स्पष्ट रूप से लिखा गया है, ''विद्यार्थियों में क्रियात्मक ऊर्जा का संचरण किया जाए जिससे वे सांस्कृतिक विरासत और संपन्न रुचियों के विकास में समर्थ हो सकें, जिन्हें वे अपने खाली समय तथा बाद में अपने जीवन में भी जारी रख सकें।'' माध्यमिक शिक्षा की एक मुख्य भूमिका के रूप में इसका उल्लेख करते हुए यह सुझाव दिया गया है कि कला, संगीत, नृत्य इत्यादि विषयों को पाठ्यचर्या में एक सम्मानजनक स्थान दिया जाना चाहिए।

यह भी सुझाव दिया गया कि हाई स्कूल के प्रत्येक विद्यार्थी को एक शिल्प सीखना चाहिए जो कि इस अवस्था के लिए जरूरी माना जाए; प्रत्येक विद्यार्थी को हस्त कार्यों हेतु कुछ समय मिलना चाहिए जिसमें उसे एक उचित मानक दक्षता प्राप्त करनी चाहिए जिससे कि भविष्य में आवश्यकता पड़ने पर वह इससे जीविकोपार्जन भी कर सके। किंतु यह प्रस्ताव मात्र आर्थिक आधार पर नहीं दिया गया था। हाथों से कार्य करके किशोर बच्चे श्रम का सम्मान करना सीखते हैं और रचनात्मक कार्य करने के आनंद का भी अनुभव करते हैं। उपयोग और सौंदर्य की वस्तुओं को निपुणता और संपूर्णता के साथ बनाने से ज्यादा बड़ा शिक्षा का कोई और माध्यम नहीं है। यह प्रायोगिक अभिरुचि को विकसित करता है, विचारों को स्पष्ट बनाने में सहायक होता है, सहकारी कार्यों हेतु अवसर प्रदान करता है और इस प्रकार संपूर्ण व्यक्तित्व को समृद्ध बनाता है।

कोठारी आयोग (1964-66) का प्रतिवेदन इस बात पर बल देता है कि उम्र की उस अवस्था में, जो खोज और आविष्कार को महत्त्व देती है, रचनात्मक अभिव्यक्ति के लिए शिक्षा का दिया जाना इसे और अधिक सार्थक बना देता है। "संगीत और दृश्य कला के शिक्षकों के प्रशिक्षण हेतु उचित सुविधाएँ उपलब्ध नहीं हैं। शिक्षा में कला की उपेक्षा शिक्षण प्रक्रिया को निर्धन बनाती है और सौंदर्यपरक रुचियों और मूल्यों को अधोगमन की ओर अग्रसर करती है।" यह संस्तुति दी गई कि शासन को कला शिक्षा की वर्तमान स्थिति के सर्वेक्षण के लिए विशेषज्ञों की एक समिति नियुक्त करनी चाहिए और इसके विस्तार और व्यवस्थित विकास हेतु संभावनाओं की खोज करनी चाहिए। आयोग ने यह भी प्रस्तावित किया कि स्थानीय समुदाय के व्यावहारिक सहयोग के साथ देश के सभी भागों में बाल भवन स्थापित किए जाने चाहिए। विश्वविद्यालय स्तर पर कला विभागों को सशक्त किया जाना चाहिए और इस क्षेत्र में शोध अध्ययनों को बढ़ावा देना चाहिए।

फलत: विद्यालयों में कला शिक्षा के सुधार के पूरे मुद्दे का परीक्षण करने के लिए एन.सी.ई.आर.टी. के प्रशासनिक निकाय ने 1966 में श्री के.जी. सैयदैन की अध्यक्षता में एक समिति नियुक्त की थी। समिति ने अपना प्रतिवेदन 1967 में प्रस्तुत किया था जिसमें दी गई संस्तुतियों में ज़ोर दिया गया था–स्कूलों में कला शिक्षण के लक्ष्यों और उद्देश्यों पर, मुख्य शैक्षिक लक्ष्य की प्राप्ति में कला शिक्षा की ज़रूरी भूमिका तथा पूर्व प्राथमिक से शिक्षा के सभी स्तरों पर कला शिक्षा की आवश्यकता पर। इसकी संस्तुतियों में यह भी शामिल था कि कला विद्यालयों में पाठ्यक्रम पूरा करने के पश्चात् उच्च प्राथमिक स्तर और माध्यमिक स्तर के शिक्षक बनने के लिए विद्यार्थी इन संस्थानों में कला शिक्षा के व्यावसायिक प्रशिक्षण हेतु प्रवेश प्राप्त कर सकें। कला शिक्षा विभाग विश्वविद्यालय के शिक्षक-शिक्षा संस्थानों में

ही खोले जाने चाहिए। समिति ने यह भी प्रस्तावित किया कि राष्ट्रीय शैक्षिक अनुसंधान और प्रशिक्षण परिषद् में भी जल्द ही एक कला शिक्षा विभाग की स्थापना की जानी चाहिए।

1986 की राष्ट्रीय शिक्षा नीति, विद्यार्थियों में देश के विभिन्न भागों में रहनेवाले लोगों की विविध सांस्कृतिक और सामाजिक रीतियों की एक समझ बनाने को स्कूली शिक्षा का एक महत्वपूर्ण उद्देश्य मानते हुए इस पर ज़ोर देती है। 1986 की नीति का अनुगमन करते हुए 1992 की 'कार्यकारी योजना' ''बच्चे की जन्मजात संभावनाओं को खोजने के संदर्भ में बच्चे के व्यक्तित्व के विकास की प्रक्रिया को प्रोत्साहित करने के क्रम में सांस्कृतिक परिप्रेक्ष्यों को जोड़ने वाली शिक्षा'' पर स्पष्ट विचार प्रकट करती है। औपचारिक शिक्षा के पूर्व प्राथमिक स्तर से लेकर उच्चतम स्तर तक एक क्रियान्वयन योजना तैयार की गई। आपसी भागीदारी, सांस्कृतिक अभिव्यक्तीकरण के लिए सस्ती एवं उपयोगी सामग्री का उपयोग और भाईचारे की धारणा को प्रोत्साहित करने के लिए समुदाय की सक्रिय भागीदारी, पाठ्यचर्या सुधार, शिक्षकों की अभिप्रेरणा, युवा पीढ़ी को सांस्कृतिक एवं सम्मिलित क्रियाकलापों में भाग लेने के लिए शिक्षकों द्वारा प्रोत्साहित किया जाना, आदि इस प्रपत्र के उत्कृष्ट अभिलक्षण थे।

पहली तीन राष्ट्रीय पाठ्यचर्या की रूपरेखाओं (1975, 1988 और 2000) ने विद्यालयी पाठ्यचर्या में कला शिक्षा के लक्ष्यों और उद्देश्यों को स्पष्ट करते हुए कला शिक्षा पर बल दिया है। विविध कलाओं–नृत्य, संगीत, चित्रकारी इत्यादि का शिक्षण विद्यार्थियों को उनकी क्षमताओं को खोजने के अवसर देने और उन्हें इस प्रक्रिया में मदद तथा बढ़ावा देने के एकसमान मूल सिद्धांतों पर आधारित होना चाहिए। एक महत्वपूर्ण बदलाव था कला शिक्षा के उद्देश्य में जो अब शिल्प कार्य करने में श्रम की गरिमा का बढ़ावा न रहकर सौंदर्यपरक संवेदनशीलता और स्वतंत्र अभिव्यक्ति का विकास हो गया।

इन राष्ट्रीय पाठ्यचर्या की रूपरेखाओं ने अनुशंसित किया कि ''कला शिक्षा कार्यक्रम ऐसा हो जो शिक्षार्थी को लोक कला, स्थानीय कला और अन्य सांस्कृतिक घटकों से परिचित कराने पर ध्यान केंद्रित करे जिससे उसमें राष्ट्रीय विरासत के प्रति जागरूकता और सम्मान का भाव विकसित हो सके। अन्य केंद्रीभूत अवयवों से संबंधित मूल्यों जैसे भारत की सांस्कृतिक विरासत, स्वतंत्रता संग्राम का इतिहास एवं पर्यावरण संरक्षण आदि को प्रोत्साहित करने के लिए क्रियाकलापों तथा योजनाओं और विषयवस्तुओं का भी चयन एवं निर्माण करना चाहिए।'' स्वयं कुछ करके सीखना और कला के प्रकारों से अवगत होना शिक्षार्थी के स्वयं के अनुभवों के विस्तार हेतु अति आवश्यक है। कला शिक्षा विखंडित नहीं होनी चाहिए। कक्षा दस तक सभी स्तरों में कला का समन्वय आवश्यक है।

विद्यार्थियों पर पाठ्यचर्या के बोझ को कम करने के माध्यमों तथा तरीकों और साथ ही साथ जीवनपर्यंत स्व-शिक्षण और दक्षता निर्माण के लिए अधिगम की गुणवत्ता में सुधार करने के उद्देश्य से 1992 में प्रो. यशपाल की अध्यक्षता में एक समिति गठित की गई। इस समिति के प्रतिवेदन के फलस्वरूप अनुशंसाओं की एक सूची–''शिक्षा बिना बोझ के'' के रूप में सामने आई। किंतु व्यवहार में भार बढ़ा ही और स्व-अभिव्यक्ति और सृजनात्मकता के कम ही अवसर शेष रहे।

विश्व में भारत ही एक ऐसा देश नहीं है जहाँ कला शिक्षा की समस्या विद्यमान है। यह एक विश्वव्यापी समस्या है जिसको 2000 में यूनेस्को के महानिदेशक ने एक अपील के रूप में प्रस्तुत किया। इसमें कला शिक्षा और रचनात्मकता को शांति की संस्कृति के विकास के लिए विद्यालयों में प्रोत्साहित करने की अपील की गई है। अपने संबोधन में उन्होंने कहा कि–

अब एक अधिक संतुलित शिक्षा की आवश्यकता है, जहाँ विज्ञान, तकनीक और खेल संबंधी विषयों के साथ मानव विज्ञान और कला शिक्षा भी विद्यालयी

शिक्षा के हर स्तर पर कदम से कदम मिलाकर चले। जिसके दौरान बच्चे और किशोर सीखने की ऐसी प्रक्रिया में भाग लें जो उनके लिए फायदेमंद हो और जो उनमें बौद्धिक और भावनात्मक संतुलन बनाए रखे। ऐसे परिप्रेक्ष्य में खेल क्रियाएँ सृजनात्मकता को सजीव बनाने का एक ऐसा कारक हैं जिसे कला शिक्षा में प्रोत्साहन की जरूरत है। कला शिक्षा शरीर के साथ-साथ मस्तिष्क को भी प्रेरित करने वाली होनी चाहिए। भावनाओं को गति प्रदान कर यह मस्तिष्क का विकास करती है। यह स्मृति बढ़ाती है जिससे बच्चे की संवेदनशीलता तीक्ष्ण होती है और वे अन्य विषयों के ज्ञान को प्राप्त करने के लिए सक्षम बनते हैं, मुख्य रूप से विज्ञान के लिए यह रचनात्मक योग्यताओं का विकास करती है और उनके आवेग को उनके मनपसंद कार्यों को करने की ओर मोड़ती है।

2. कला शिक्षा में शिक्षण-अधिगम तथा मूल्यांकन की वर्तमान स्थिति

पिछले पन्नों में हमने देखा कि किस प्रकार शिक्षा के लगभग प्रत्येक प्रपत्र में कला शिक्षा पर बल दिया गया है परंतु वस्तुस्थिति यह है कि विद्यालयों, शिक्षकों, अभिभावकों, विद्यालय प्रबंधकों सभी के द्वारा कला को गौण स्थान दिया जाता है, जबकि विद्यार्थी कला संबंधी गतिविधियों में अत्यधिक रुचि रखते हैं। कला शिक्षा की वर्तमान स्थिति यह है कि विगत कुछ दशकों में यह बद से बदतर होती चली गई है।

कला शिक्षा की वर्तमान स्थिति के पीछे बहुत से कारण हैं। राष्ट्रीय शैक्षिक अनुसंधान और प्रशिक्षण परिषद् द्वारा कला शिक्षा में किए जा रहे शोध कार्य "शिक्षण-अधिगम प्रणाली एवं मूल्यांकन पद्धति–एक गहन अध्ययन'' में जो समस्याएँ सामने आ रही हैं उनसे दृष्टिगोचर होता है कि विद्यार्थी अपनी प्रारंभिक शिक्षा के वर्षों में सृजनात्मकता में रुचि रखते हैं परंतु कक्षा छः तक पहुँचते-पहुँचते कला शिक्षा में उनकी रुचि क्रमशः कम होती जाती है।

विद्यालयों में कला शिक्षा के स्तर में सुधारों हेतु सुझाव :

- कला शिक्षा को कक्षा 10 तक अनिवार्य विषय के रूप में पढ़ाना चाहिए।
- ऐसे मूल्यांकन की आवश्यकता है जो कि परीक्षा पर आधारित न होकर प्रक्रिया संबंधी हो।
- कला शिक्षा विद्यार्थियों के लिए एक आनंददायी, उन्मुक्त अभिव्यक्ति हेतु सीखने की प्रयोगात्मक प्रक्रिया होनी चाहिए।
- विद्यालय तथा विद्यालय से बाहर कलात्मक गतिविधियों के लिए स्थान, समय एवं संसाधन एकत्रित करना प्रत्येक विद्यालय के लिए आवश्यक होना चाहिए।
- शिक्षा से संबंधित विभिन्न वर्गों में कला शिक्षा के प्रति अधिक जागरूकता पैदा करने की आवश्यकता है।
- कला शिक्षा पाठ्यक्रम के विभिन्न पहलुओं को प्रभावकारी ढंग से कार्यान्वित करने हेतु विद्यालयों एवं शिक्षकों के लिए स्पष्ट निर्देश होने चाहिए।
- शिक्षण-प्रशिक्षण एवं अभिविन्यास के विभिन्न स्तरों में सशक्त बदलाव लाए जाने की आवश्यकता है।
- उच्च प्राथमिक स्तर से कला शिक्षा को प्रशिक्षित एवं विशेषज्ञ शिक्षकों द्वारा पढ़ाया जाना चाहिए।

इसके अनेक कारण हैं। इनमें विद्यालयों में मुख्य विषयों पर अधिक बल दिया जाना प्रमुख है। इन विषयों

में संपूर्ण सत्र में विभिन्न परीक्षाओं द्वारा मूल्यांकन किया जाता है। कला शिक्षा का मूल्यांकन अन्य विषयों के साथ जुड़ा न होने के कारण शिक्षकों, विद्यार्थियों यहाँ तक कि विद्यालयों द्वारा भी उसे गंभीरता से नहीं लिया जाता है।

एक और बड़ी समस्या है ऐसे शिक्षकों की कमी जो कला शिक्षा के विभिन्न क्षेत्रों में पढ़ाने के लिए प्रशिक्षित हों। ऐसे कला शिक्षक जो चार से छः वर्ष तक कला महाविद्यालयों या विश्वविद्यालयों के विभिन्न दृश्य एवं प्रदर्शनकारी कला में कला विभागों से शिक्षित होते हैं, उन्हें कला शिक्षा का न तो प्रशिक्षण प्राप्त होता है और न ही विद्यालय में कला शिक्षा पद्धतियों का। वे अपनी विधा में तो प्रशिक्षित होते हैं परंतु कला शिक्षक के रूप में नहीं। वे 10-15 वर्ष के विद्यार्थियों के लिए कला शिक्षण की विधियों में दक्ष नहीं होते। एक शिक्षक की भूमिका विद्यार्थी के जीवन में वाहन की तरह होती है अतः शिक्षक को बाल मनोविज्ञान का ज्ञान, शिक्षाशास्त्र एवं शिक्षण विधाओं का ज्ञान होना भी आवश्यक है। कला शिक्षा गतिविधियों पर आधारित विषय है जिसे पाठ्यपुस्तकों की जरूरत नहीं। अतः ऐसी स्थिति में शिक्षक की भूमिका और भी अहम हो जाती है। उन्हें अन्य शिक्षकों की अपेक्षा अधिक सजग, रचनात्मक एवं सृजनशील होना चाहिए।

कला शिक्षा का मुख्य धारा में महत्व न होने का अन्य कारण है विद्यार्थियों तथा अन्य शिक्षकों में कला संबंधी व्यवसायों के बारे में विस्तृत जानकारी का न होना। शिक्षकों को कला शिक्षा को व्यावसायिक शिक्षा से जोड़ने, उसमें प्रशिक्षण पाने एवं कलाकार के रूप में जीविकोपार्जन करने के विषय में विद्यार्थियों को अवगत कराना चाहिए। कला शिक्षक को इस योग्य होना चाहिए कि वह विद्यालय प्रशासन, अभिभावकों और विद्यार्थियों को कला शिक्षा के विभिन्न पहलुओं से अवगत करा सके जिन्हें विद्यार्थी अपने दैनांदिन जीवन में या तो कलाकार के रूप में या कला पारखी के रूप में उतार सकें।

3. कला शिक्षा के उद्देश्य : भविष्य की संकल्पना

एक विद्यार्थी के प्रखर व्यक्तित्व के निर्माण एवं विकास में साहित्य, संगीत और कला सभी आवश्यक हैं।

–रवीन्द्रनाथ टैगोर

कला शिक्षा को विद्यार्थियों में रेखा, आकार, रंग, रूप, गति एवं ध्वनि में उपस्थित सौंदर्य के प्रति संवेदनशीलता विकसित करने के उपकरण के रूप में देखा जाता है। कला शिक्षा एवं सांस्कृतिक विरासत के प्रति सराहना के भाव साथ-साथ विकसित हो सकते हैं जिससे परस्पर समझ मजबूत होती है।

विद्यालयी शिक्षा की पाठ्यचर्या में कला शिक्षा को कक्षा 10 तक अनिवार्य विषय के रूप में सम्मिलित करने के विशेष लक्ष्य हैं जिनमें बच्चों के व्यक्तित्व के चहुंमुखी विकास में योगदान देना मुख्य है। शिक्षण-अधिगम की प्रक्रिया में बच्चों को आनंद उठाने में समर्थ बनाना भी एक उद्देश्य है। कला शिक्षा बच्चों को सांसारिक सौंदर्य की पूर्ण सराहना एवं अनुभव करने योग्य बनाती है तथा स्वस्थ मानसिक विकास में मददगार सिद्ध होती है। कला शिक्षा का एक अन्य उद्देश्य बच्चों को प्रकृति के करीब लाना है जिससे वे अपनी धरोहर तथा परंपराओं से अवगत हों और एक दूसरे के कार्य को सम्मान से देखें।

शिक्षा के प्रारंभिक वर्षों में प्राप्त किए अनुभव को माध्यमिक स्तर पर संगीत, नृत्य, नाटक, रेखांकन और पेंटिंग, कठपुतली, पारंपरिक कलाओं एवं शिल्प, स्वास्थ्य एवं शारीरिक शिक्षा संबंधी गतिविधियों में भाग लेने का अवसर देकर संवर्द्धित किया जा सकता है। राष्ट्रीय पाठ्यचर्या की रूपरेखा 2005 में यह आशा व्यक्त की गई है कि प्राथमिक स्तर पर ललित कलाओं के प्राप्त अनुभवों से विद्यार्थियों में आगे की अवस्थाओं में कला के विभिन्न रूपों का चुनाव करने हेतु न केवल पर्याप्त प्रेरणा और रुचि जागृत होगी वरन् सौंदर्यात्मकता के प्रति

संवेदनशीलता और परंपरा तथा विरासत के प्रति सम्मान भी जाग्रत होगा।

दुर्भाग्यवश, हमारी शिक्षा पद्धति भारत के महान शिक्षाविदों एवं दार्शनिकों को महत्त्व नहीं देती, जैसा कि श्री अरविंद ने कहा : ''प्लेटो ने अपनी पुस्तक *रिपब्लिक* में शिक्षा में संगीत के महत्व पर अत्यधिक बल दिया है; ऐसा संगीत जिसके लोग अभ्यस्त हों, वही उन लोगों के चरित्र को लक्षित करता है। चित्रकला और मूर्तिकला का महत्त्व भी कम नहीं है। जो देखा जाता है उसका सर्वाधिक प्रभाव मस्तिष्क पर पड़ता है, यदि आँखें बाल्यावस्था से ही सौंदर्य, सामंजस्य और रूप-रंग देखने की अभ्यस्त होंगी तो बड़े होने पर उनकी रुचि, आदतें एवं चरित्र स्वत: उसी प्रकार के सौंदर्य, सामंजस्य और व्यवस्था का अनुसरण करेंगे....''

3.1 पूर्व-प्राथमिक स्तर

पूर्व-प्राथमिक स्तर पर दृश्य एवं मंचीय कलाएँ पूर्ण समन्वित रूप से पढ़ाई जानी चाहिए। सभी विषयों को रेखांकन, चित्रकला, मृणमूर्त कला, रोल प्ले, नृत्य, कहानी, संगीत आदि के माध्यम से पढ़ाया जाना चाहिए। कला शिक्षा के माध्यम से पढ़ाने का मुख्य उद्देश्य भी सामान्य शिक्षा के उद्देश्य के समान होना चाहिए।

पूर्व-प्राथमिक स्तर पर उद्देश्य

- आनंद का अनुभव।
- बच्चों में अपने परिवेश के प्रति प्रारंभिक संवेदना जगाना।
- प्राकृतिक पदार्थों जैसे मिट्टी, बालू, फूल-पत्ती आदि से खेल-खेल में सीखने में सहायता देना।
- गति, लय एवं ध्वनि के साथ-साथ गाने का प्रयास एवं नृत्य करने के माध्यम से सीखने में सहायता देना और साथ ही प्राकृतिक परिवेश के माध्यम से वे आनंद का अनुभव करें, इसमें सहायता देना।

प्राथमिक स्तर पर उद्देश्य

- आनंद का अनुभव।
- बच्चे को अपने आस-पास के माहौल जिसमें कक्षा, विद्यालय, घर और समुदाय सम्मिलित हैं उसे स्वच्छ और सुंदर रखने के लिए कलात्मक विधाओं का प्रयोग करना सिखाना, जिसमें उसे आनंद आता हो।
- बच्चे को जीवन के विभिन्न पहलुओं पर अपने विचार और भावनाओं को स्वतंत्र रूप से अभिव्यक्त करना सिखाना।
- बच्चे में निरीक्षण, अन्वेषण एवं अभिव्यक्ति द्वारा सभी संवेदनाओं का विकास करना।

इस स्तर पर बच्चों को बिना पाठ्यक्रम के बोझ के आनंदपूर्वक सीखने का अनुभव होना चाहिए। उन्हें अपने परिवेश एवं दैनिक जीवन में प्रयुक्त होने वाले मूल्यों की जानकारी दी जानी चाहिए। इस स्तर पर बच्चे द्वारा स्वतंत्र अभिव्यक्ति पर जोर दिया जाना चाहिए।

पूर्व-प्राथमिक स्तर पर कला माध्यम से शिक्षा देने का उद्देश्य मुख्यत: बच्चों में पांचों इंद्रियों को विकसित करना है। पाठ्यचर्या का यह क्षेत्र बच्चे के व्यक्तित्व के चहुँमुखी विकास के लिए अनुभव एवं क्रियाकलाप के अवसर प्रदान करता है। अत: इसे उनके विकास के स्तर के अनुरूप होना चाहिए। विशेषत: जहाँ संगीत, नाटक, रेखांकन, चित्रकला, मिट्टी के मॉडलों आदि द्वारा संतोषपूर्ण अनुभव दिए जाएँ वहीं कहानी और कथानकों का चुनाव इस प्रकार हो कि वे बच्चों की जिज्ञासा, कल्पनाशीलता तथा आश्चर्यबोध बढ़ाने में प्रभावी भूमिका निभाएँ।

3.2 प्राथमिक स्तर

प्राथमिक स्तर पर कला को स्व-अभिव्यक्ति का माध्यम माना जाए। कला शिक्षा का लक्ष्य स्व-अभिव्यक्ति, सृजनात्मकता और स्वतंत्रता की अनुभूति के द्वारा मनोवैज्ञानिक स्वास्थ्य में योगदान देना हो।

3.3 उच्च प्राथमिक स्तर

प्राथमिक स्तर पर विद्यार्थियों द्वारा ललित कला के अनुभव उनमें विषय के प्रति पर्याप्त मात्रा में प्रोत्साहन एवं रुचि पैदा कर देते हैं। उच्च प्राथमिक एवं माध्यमिक स्तरों पर कला की पाठ्यचर्या के उद्देश्य हैं शास्त्रीय एवं लोक कलाओं के प्रति जागरूकता और रुचि पैदा करना ताकि इस प्रक्रिया में शिक्षार्थी आनंद ग्रहण करने तथा प्रदान करने वाले की भूमिका अदा करे। कला शिक्षा रचनात्मक अभिव्यक्ति का एक अत्यंत संतोषदायी माध्यम है जिसे समाज के हित के लिए महत्व दिया जाना चाहिए। उच्च प्राथमिक स्तर पर कला शिक्षा का मुख्य उद्देश्य विद्यार्थियों द्वारा सांस्कृतिक गतिविधियों में प्रतिभागिता, सामुदायिक मदद और कुछ आधारभूत सुविधाओं का निर्माण होना चाहिए।

उच्च प्राथमिक स्तर पर उद्देश्य

- आनन्द का अनुभव।
- विद्यार्थियों को विभिन्न कलाओं को पहचानने एवं सराहने के योग्य बनाना।
- संवेदनशीलता एवं सौंदर्यबोध की अन्तर्दृष्टि विकसित करना।
- कला के ज्ञान का जीवनचर्या एवं अन्य विषयों के साथ समन्वयन बनाना।
- विद्यार्थियों को अधिक सृजनात्मक बनाना।
- शिक्षार्थियों को देश की समृद्ध धरोहर के प्रति जागरूक बनाना।

3.4 माध्यमिक स्तर

माध्यमिक स्तर सौन्दर्यबोधात्मक संवेदनशीलता का संवर्धन और प्राकृतिक तथा सांस्कृतिक संरक्षण पर आधारित परियोजनाओं एवं भारतीय संस्कृति के अध्ययन के द्वारा सामाजिक मूल्यों को बढ़ावा देने वाले स्तर के रूप में पहचाना जाता है। कलाकारों (समुदाय में) के साथ काम करने के अवसर, समुदाय में पर्व एवं उत्सव मनाना, भौतिक पर्यावरण एवं आस-पास के दृश्य को सजाना इत्यादि के लिए यह सही अवधि है। इस स्तर पर कला

माध्यमिक स्तर पर उद्देश्य

- आनन्द का अनुभव।
- विद्यार्थियों को नए माध्यमों एवं तकनीकियों से अवगत कराना जो उनकी रचनात्मक अभिव्यक्ति एवं सामान्य जरूरतों की वस्तुओं को बनाने में सहायक सिद्ध हो सके।
- लोक कलाओं, क्षेत्रीय कलाओं एवं सांस्कृतिक घटकों की जानकारी के अवसर प्रदान करना जिससे वे राष्ट्रीय धरोहर और सांस्कृतिक विविधता की सराहना कर सकें।
- विद्यार्थियों को उनकी कलात्मकता एवं सौंदर्य अनुभूति को दैनिक जीवन में प्रयोग करने के योग्य बनाना।
- अपने क्षेत्र के कलाकारों के जीवन एवं कार्य से परिचित कराना।
- समुदाय के सहयोग से अपने क्षेत्र में उपलब्ध सामग्री के जरिये सृजनात्मक अभिव्यक्ति का विकास करना।
- प्रकृति एवं कलाओं के मूल तत्वों में उपस्थित सौंदर्य की प्रशंसा करने की क्षमता परिष्कृत करना।

शिक्षा में दृश्य एवं मौखिक संसाधनों और उनके अन्वेषण; रचनात्मक परियोजना कार्यों एवं उनका प्रदर्शन; अंतर्समूहिक और अंतर्विद्यालयी गतिविधियाँ; अध्ययन भ्रमण तथा समुदाय के कलाकारों से साक्षात्कार; नाटक सहित समुदाय एवं आस-पास के क्षेत्रों में प्रचलित पारंपरिक कला जिसमें कि समुदाय तथा पड़ोस में प्रचलित सामजिक कला भी शामिल है, इन सबका गहन अध्ययन आदि अधिगम का हिस्सा होना चाहिए।

ऐसी गतिविधियों, कार्यक्रमों एवं विषयवस्तुओं का चुनाव किया जाना चाहिए जिससे भारत की सांस्कृतिक विरासत, स्वतंत्रता संग्राम का इतिहास तथा पर्यावरण संरक्षण से जुड़े मूल्यों को बढ़ावा मिल सके। कार्य करके सीखना एवं कला के विभिन्न रूपों के परिचय से शिक्षार्थी के अपने अनुभवों तथा स्वअभिव्यक्ति को विस्तार मिलता है।

इस स्तर पर पाठ्यचर्या में प्रत्येक विषय विशिष्ट होता है एवं उसे पृथक रूप से पढ़ाया जाता है। इसी प्रकार कला शिक्षा को भी एक विशेष विषय के रूप में पढ़ाया जाना चाहिए। माध्यमिक स्तर पर कला शिक्षा ऐसी हो जहाँ ***कला ज्ञान लेने का एक मार्ग बने।***

विश्व के साथ परस्पर बातचीत और सीखने की अमौखिक प्रक्रिया को कला शिक्षा उपलब्ध कराती है। ज्ञान-निर्माण एवं रचनात्मक सार्थकता का माध्यम बनती है। कलात्मक अभिव्यक्ति की प्रक्रिया विद्यार्थियों में सामाजिक यथार्थ, वैश्विक विचारों, भावनाओं और यहाँ तक कि मायावी जगत की जानकारी का अन्वेषण करने का अवसर देती है। इस स्तर पर कला शिक्षा मीडिया तथा कलाकारों की सामग्री को शामिल करेगी।

3.5 उच्चतर माध्यमिक स्तर

शिक्षा में यह स्तर सर्वाधिक चुनौती भरा होता है जहाँ विद्यालयों में बहुत कम ही विद्यार्थी प्रवेश पाते हैं। कक्षा 11-12 में कला एक अनुशासित विषय की ओर उन्मुख होती है।

उच्चतर माध्यमिक स्तर पर उद्देश्य

- कला रूप में दक्षता प्राप्त करना।
- कला संबंधी किसी व्यावसायिक पाठ्यक्रम के लिए तैयार होना।
- अपने क्षेत्र, देश अथवा विश्व के कलाकारों एवं उनके कार्य की जानकारी कला इतिहास के माध्यम से प्राप्त करना।
- विभिन्न माध्यमों के प्रयोग द्वारा स्व-अभिव्यक्ति के तरीकों का विकास करना।
- कला में आनंद का अनुभव करना।

कला शिक्षा से तात्पर्य है समुदाय की सांस्कृतिक विरासत के बारे में जानना, कलात्मक सौन्दर्य की भाषा सीखना, विवेचना एवं कला इतिहास की पूर्ण जानकारी प्राप्त करना। इसके साथ ही कला संबंधी विभिन्न व्यवसायों के बारे में जानकारी लेना और स्वयं को कला जगत में एक कलाकार, एक रचनाकार, आलोचक अथवा कला पारखी के रूप में प्रवेश पाने के लिए तैयार करना।

4. कला शिक्षा और विद्यालयी पाठ्यक्रम में इसका समन्वयन

"विज्ञान कला का सर्वाधिक रचनात्मक स्वरूप है।"

–सर सी.वी. रमन

विगत दशकों में समय के साथ-साथ विभिन्न शिक्षा आयोगों के प्रतिवेदनों एवं विद्यालयी शिक्षा के लिए राष्ट्रीय पाठ्यचर्या की रूपरेखाओं में कला शिक्षा के लिए भिन्न-भिन्न नामों एवं शब्दावली का प्रयोग किया गया है और उन्हें विभिन्न विषयों में समाहित किया गया। 1952-53 के शिक्षा आयोग प्रतिवेदन में कला शिक्षा को प्राथमिक स्तर पर ललित कला, हस्तशिल्प और संगीत के रूप में देने का और एस. यू. पी. डब्ल्यू (समाजोपयोगी

बाल सभा - बच्चों का एक मंच (फोरम)

एक आदर्श स्थिति में प्रत्येक विद्यालय में बच्चों का एक मंच होना चाहिए जहाँ उनकी सृजनात्मक एवं कलात्मक प्रतिभा को पूर्ण अभिव्यक्ति मिल सके। यह एक आधे दिन का पाक्षिक संभवत: शनिवार अथवा साप्ताहिक अवसर हो सकता है, जहाँ बच्चों को विषय की कल्पना करने, योजनाओं को बनाने और कार्यक्रम को संगठित करने की अनुमति हो और उसमें शिक्षकों को भाग लेने के लिए आमंत्रित किया जाए। यह पूरी तरह बच्चों का कार्यक्रम हो जहाँ वे सप्ताह भर में किए गए कला और शिल्प के कार्य को प्रदर्शित करें। स्वयं लिखित कविताओं का पाठ करें, गाएँ, नाचें, चुने हुए या स्वयं के लिखे नाटकों का मंचन करें।

उत्पादक कार्य) को उच्च माध्यमिक स्तर पर देने का प्रस्ताव दिया गया। कला शिक्षा को पाठ्यचर्या की भिन्न रूपरेखाओं में अलग-अलग नाम दिए गए। 1975 की पाठ्यचर्या रूपरेखा में इसे कार्यानुभव कहा गया और वर्ष 2000 की रूपरेखा में इसे 'स्वस्थ एवं उत्पादक जीवन की कला के रूप में' स्थान मिला। ***समय आ गया है जब शिक्षा के पाठ्यक्रम में कला शिक्षा को इसकी पहचान दी जाए और इसे कला शिक्षा के रूप में ही संबोधित किया जाए–जिसके अन्तर्गत दृश्य एवं मंचीय कलाएँ आती हैं।*** इस तरह एक छत के नीचे कला शिक्षा के अध्ययन के उद्देश्यों, विषयवस्तु, अध्ययन शैली, मूल्यांकन पद्धति इत्यादि में बहुत बदलाव आएगा।

कला शिक्षा पूर्व प्राथमिक से माध्यमिक स्तर तक विद्यालयी शिक्षा का अनिवार्य विषय होना चाहिए। नियमित शिक्षा पद्धति के अंतर्गत, कला शिक्षा के दो अभिगम हैं।

कला गतिविधि पर आधारित आनुभाविक विषय है जिसमें सृजनात्मक प्रक्रिया के माध्यम से अवलोकन, कल्पना एवं दृष्टिकोण के विकास का अवसर प्राप्त होता है। प्रत्येक बच्चे में सभी प्रकार की भावनाएँ होती हैं जिन्हें बच्चों की आंतरिक दुनिया से बाहर निकालने की प्रक्रिया में कला शिक्षा सहायक सिद्ध होती है।

एक वह जहाँ कला शिक्षा, शिक्षा का एक माध्यम है और दूसरा जहाँ कला शिक्षा एक विषय के रूप में पढ़ाई जाए। कला के माध्यम के रूप में कला का प्रयोग विद्यालयों में विभिन्न विषयों के शिक्षण-अधिगम के लिए किया जाना चाहिए (दृश्यात्मक तथा प्रदर्शनकारी)। इस अधिगम में कला का अन्य विषयों के साथ समन्वयन एक द्वि-आयामी प्रक्रिया है। कला शिक्षा का यह समन्वयन सामाजिक विज्ञान, भाषा, विज्ञान तथा गणित जैसे विषयों में सामग्री के रूप में हो सकता है जहाँ कला रूपों पर सूचनाएँ दी जा सकती हैं और साथ ही विभिन्न विषयों में गतिविधियों, परियोजना कार्यों अथवा अभ्यासों के रूप में भी।

कला के माध्यम से अधिगम विद्यालय शिक्षा के प्रत्येक स्तर (2+10+2) में समन्वित होना चाहिए। बच्चे के शिक्षण में ऊर्ध्व प्रगति की परिकल्पना की गई है। पूर्व प्राथमिक स्तर या बचपन के शुरुआत में अध्ययन कला की विभिन्न शैलियों के प्रयोग से किया जाना चाहिए जिनमें रेखांकन, चित्रकला, रोल प्ले, स्वाँग, नृत्य, गति, लय, कहानी, गाने आदि सम्मिलित हैं। इसे अगले स्तर कक्षा 3 तक जारी रहना चाहिए जहाँ बच्चों में औपचारिक शिक्षा पद्धति की शुरुआत होती है। इस स्तर पर बच्चों को दस्तकारी के साथ सभी कला रूपों में स्वयं की अभिव्यक्ति के लिए पर्याप्त समय और स्थान मिले। प्राथमिक स्तर के बाद कक्षा 4-5 तक कला एवं

शिल्प, संगीत, नृत्य और नाटक की पृथक कक्षाएँ होनी चाहिए। उच्च प्राथमिक एवं माध्यमिक विद्यालयी स्तरों में कला शिक्षा एक अलग विषय के रूप में पढ़ाई जानी चाहिए और इसे माध्यमिक स्तर पर कक्षा दस तक जारी रखना चाहिए।

विद्यालयों द्वारा कला शिक्षा का उपयोग विभिन्न अवसरों जैसे वार्षिक उत्सव, निरीक्षण दिवस इत्यादि पर महज एक सज्जा की गतिविधि के रूप में नहीं करना चाहिए। कला शिक्षा को विद्यालय की नियमित गतिविधियों जैसे कक्षाकक्ष की व्यवस्था, गैलरी, हॉल, कॉरीडोर इत्यादि और स्कूल डायरी, कार्ड्स, स्कूल बैग आदि के अभिकल्पन में अनुप्रयुक्त होना चाहिए।

4.1 कलाओं के माध्यम से अधिगम कला का शिक्षा में समन्वय (स्तरवार)

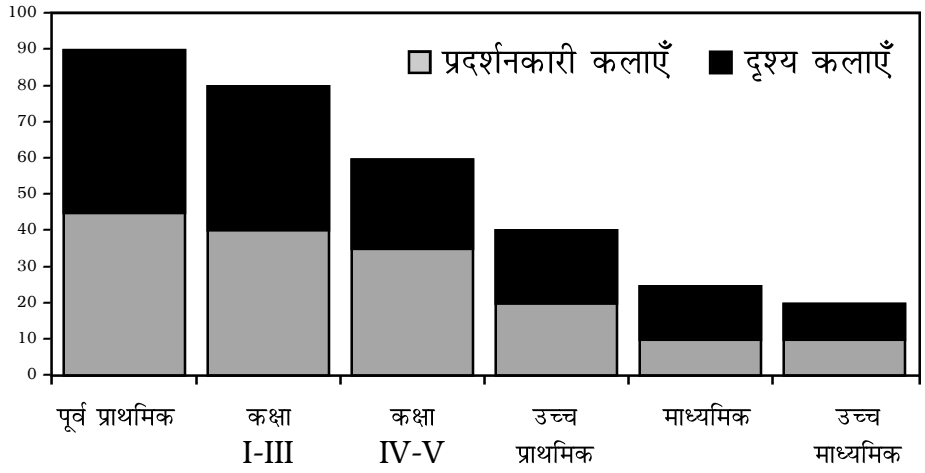

5. कला शिक्षा की पाठ्यचर्या

5.1 पूर्व-प्राथमिक स्तर

इस स्तर पर बच्चे 3-5 वर्ष के बीच होते हैं और उनमें उच्चस्तरीय ऊर्जा तथा कई प्रकार की जिज्ञासाएँ होती हैं। उन्हें इस ऊर्जा के उपयोग की जरूरत है और इसका बेहतर उपयोग उनको रचनात्मक कार्यों में लगाकर हो सकता है। इस स्तर पर अध्ययन कला के माध्यम से ही होना चाहिए चाहे वह रेखांकन हो, चित्र हो, पेंटिंग हो, मिट्टी से आकार बनाने का काम हो, गाना गाना हो अथवा क्रियाएँ या गतियाँ हों।

एक अन्य राष्ट्रीय फोकस समूह है जिसने प्रारंभिक बाल्यावस्था की शिक्षा पर कार्य किया और इस अवस्था की कला शिक्षा की पाठ्यचर्या इस समूह के परामर्श के बाद ही तैयार की गई है।

उद्देश्य

इस स्तर पर कला शिक्षा के निम्न उद्देश्य हैं:

- आनंद देने वाली गतिविधियों में बच्चों को लगाए रखना।
- बच्चों को अपने आस-पास के वातावरण और पर्यावरण का अवलोकन करने, जिज्ञासु बनाने और दृश्य के माध्यम से कल्पना का विस्तार देने में सहयोग करना।
- बच्चे को स्वतंत्रतापूर्वक और स्वेच्छा से अभिव्यक्त करने के अवसर देना।
- बच्चों के मन: प्रेरक कौशलों का विकास।
- भावनात्मक अभिव्यक्ति, संचार, भाषा, कौशल एवं सृजनात्मक अभिव्यक्ति का विकास।
- बच्चों को लय और सुर की बुनियादी बातों से परिचित कराना।

- विभिन्न प्रकार की ध्वनियों की खोज और उनमें अंतर करना, जैसे कि सुरीली और संगीतात्मक ध्वनियाँ।

विषयवस्तु, विधियाँ एवं सामग्रियाँ

बच्चों को लय और सुर में कविताएँ सिखानी चाहिए जिससे उन्हें अभिनय और गाने के साथ सीखने में आनंद आए। ये कविताएँ उनके आस-पास के वातावरण से जुड़ी होनी चाहिए और उनमें लय हो जिससे बच्चों में ध्वनि संबंधी संवेदनशीलता का विकास हो। बच्चों को इस बात के लिए भी उत्साहित किया जाए कि वे आसपास सामान्य रूप से पाई जाने वाली वस्तुओं से तरह-तरह की ध्वनियों के बारे में जान सकें तथा शोर एवं संगीत के बीच अंतर समझ सकें।

दृश्यकलाओं के लिए उन्हें मुक्त प्रवाह वाले माध्यम दिए जाने चाहिए जैसे क्रेयॉन, पोस्टर रंग, चॉक अथवा पानी में घुलनशील रंग। त्रि-आयामी अभिव्यक्ति हेतु उन्हें मिट्टी या प्लास्टीसीन अथवा अन्य ऐसे पदार्थ दिए जाने चाहिए जो उनके स्वास्थ्य के लिए हानिकारक न हों। कागज को मोड़ कर या काटकर आकारों का निर्माण उनके लिए रुचिकर होगा।

प्रत्येक ऐसा विद्यालय जहाँ पूर्व प्राथमिक स्तर के बच्चे आते हों, वहाँ कला सामग्रियों एवं खिलौनों से भरा एक कमरा होना चाहिए जहाँ बच्चे उनको लेकर तरह-तरह की सामग्रियाँ खोजें और उनका कलात्मक गतिविधियों के लिए प्रयोग करें।

राजकुमारी अमृत कौर शिशु अध्ययन केंद्र, नयी दिल्ली

1955 में नई दिल्ली स्थित लेडी इरविन महाविद्यालय में राजकुमारी अमृत कौर शिशु अध्ययन केंद्र स्थापित किया गया जिसको महाविद्यालय के शिशु विकास विभाग द्वारा एक प्रयोगशाला के रूप में उपयोग में लाया जाता है। उसी समय से केंद्र ने बदलते समाज की आवश्यकताओं के अनुसार शिशुओं की सर्वोत्तम देख-रेख से संबंधित विभिन्न सेवाओं को विकसित एवं लागू किया। यह केंद्र कामकाजी माता-पिताओं के बच्चों के लिए पूर्व विद्यालयी शिक्षा, दैनिक देखभाल एवं स्कूल के बाद आने वाले बच्चों के लिए आवश्यक सुविधाएँ मुहैया करवाता है। यह केंद्र विभिन्न शारीरिक क्षमताओं वाले बच्चों को गृह आधारित प्रशिक्षण कार्यक्रम के द्वारा मदद करता है तथा इसके अतिरिक्त पारिवारिक सहयोग और परामर्श भी देता है। 50 वर्ष पहले केवल 9 बच्चों से शुरुआत कर इस केंद्र में अब 250 बच्चे हैं जिसमें तीन से छह वर्ष के विशेष आवश्यकताओं वाले लगभग चालीस बच्चे भी शामिल हैं।

विद्यालयों में कलाओं के माध्यम से बच्चों को विविध अनुभव दिए जाते हैं और इनसे बच्चे स्व-अभिव्यक्ति की ओर अग्रसर होते हैं। पाठ्यचर्या को इस प्रकार की विधियों और समय के साँचे में ढाला गया है जो बच्चों को आजादी देते हैं ताकि वे अपने चलने-फिरने की इच्छा को जान सकें, समृद्ध भाषायी वातावरण से परिचित हो सकें और अभिव्यक्त करने के योग्य बन सकें। इस केंद्र में बहु-प्रणालियों एवं विधियों के प्रयोग पर बल दिया जाता है ताकि बच्चों को शिक्षण-अधिगम की प्रक्रिया में सक्रिय रूप से जोड़ा जाए। ये समझते हुए कि पूर्व बाल्यावस्था शिक्षा, बच्चों के जीवन की नींव है, जहाँ उसकी रुचियाँ आरंभ होती हैं और सीखने के प्रति अभिवृत्तियों का निर्माण होता है, उन्हें समझने और अभिव्यक्त करने का संदर्भ देना सार्थक है। विद्यालय में कलाओं का प्रयोग विभिन्न रूपों और विभिन्न तरीकों से होता है।

पूर्व बाल्यावस्था शिक्षा में कला, मुख्य रूप से नाटक का प्रयोग

कला में बच्चों की रुचि और उसका उनके क्रियाकलापों में परिलक्षित होना स्वाभाविक है। बच्चों की अभिव्यक्ति और समझ के लिए विद्यालय में अनेक कलात्मक अनुभव उपलब्ध हैं जैसे कक्षा को विभिन्न सामग्रियों से सजाना, कलाकारों और विशेषज्ञों के साथ काम करना, और प्रतिदिन कक्षा में कला का अभ्यास।

कक्षा को विभिन्न सामग्रियों से सजाना

प्रत्येक कक्षा में एक गुड़ियाघर है जहाँ बच्चे अपने जीवन से जुड़े हुए लोगों के बारे में अन्वेषण कर सकते हैं। यहाँ बच्चे अपने सपनों से खेल सकते हैं–जहाँ बच्चों के सामाजिक परिप्रेक्ष्य का प्रदर्शन किया जाता है। यहाँ के अनुभव स्कूल से बाहर बच्चों के जीवन के सामाजिक-भावनात्मक क्षेत्रों को अंतर्दृष्टि प्रदान करते हैं। जूते-चप्पल, छड़ी, टोपी, बटुए, दुपट्टे आदि से भरा यह कोना बच्चों के आकर्षण का केंद्र है तथा बच्चे इन वस्तुओं से सुरक्षित ढंग से खेल सकते हैं। बच्चे यहाँ अपने से बड़ों की नकल करते हैं और 'दूसरे' के रूप में स्वयं को देखकर आनंद उठाते हैं। ऐसे अवसर प्रदान करना जो थियेटर तथा अन्य गतिविधियों के लिए मूल आवश्यकता है, बच्चों में उत्सुकता, आत्मविश्वास और हँसमुखपन को बढ़ाते हैं।

विशेषज्ञों एवं कलाकारों के साथ कार्य करना

बच्चों को अध्यापिकाओं के साथ कला के कार्य करने के अतिरिक्त पेशेवर कलाकारों के साथ कार्य करने का अनुभव प्राप्त होता है। विद्यालय के पास एक कुम्हार है और एक संगीत शिक्षिका है जिनसे बच्चे सप्ताह में एक दिन मिलते हैं, बच्चे उनके साथ काम करते हैं, कुम्हार को काम करते हुए देखते हैं या संगीत विशेषज्ञ के साथ गीत गाते हैं और इस तरह उनके उपकरणों तथा तकनीकों के बारे में जानकारी प्राप्त करते हैं। यद्यपि इस उम्र में बच्चे अधिक बारीकियों को नहीं पकड़ पाते तथापि वे देखकर अथवा सुन कर उसका आनंद उठाते हैं। वे विभिन्न माध्यमों का प्रयोग कर छोटी-मोटी वस्तुएँ बना लेते हैं जिन्हें वार्षिकोत्सव के समय प्रदर्शित किया जाता है। इससे उनके अंदर अन्य माध्यमों/सामग्रियों से कार्य करने की रुचि उत्पन्न होती है। पूर्व शैशवकालीन शिक्षा का पाठ्यक्रम निर्धारित करते समय यह ध्यान में रखा जाता है कि इन सभी गतिविधियों का अनुभव उनके बाद के शिक्षा के वर्षों में भी उन पर गहरी छाप छोड़ता है।

दैनिक कक्षायी अभ्यास के रूप में कला

छोटे बच्चों के साथ काम करने वाले शिक्षक प्रतिदिन की गतिविधियों में कला का उपयोग करने में दक्ष होते हैं। अंकों या भाषा को सिखाने के लिए वे रंगबिरंगी वर्कशीट का प्रयोग करते हैं। हर दिन की शुरुआत 'गायन समय' से होती है जहाँ बच्चे अपनी पसंद की कविताएँ और गीत गाते हैं। इन गानों में वे साधारण वाद्यों जैसे ढपली, बक्सा, पत्थर इत्यादि का भी प्रयोग करते हैं। गुड़ियाघर की सामग्री से भी वे घर-घर खेलते हैं। इस प्रकार इन कार्यों से स्वाभाविक और जीवंत रूप से बच्चों में कला के प्रति रुचि उत्पन्न होती है।

विद्यालय के बाहर बच्चों में रुचि का विकास

बहुत से बच्चे ऐसे होते हैं जो विद्यालय के बाद केंद्र में आते हैं क्योंकि उनके माता-पिता कार्यालय में होते हैं। इस समूह की उम्र पाँच से बारह वर्ष तक की होती है। कला की विभिन्न गतिविधियाँ जैसे हस्तकला, चित्रकला, नृत्य, संगीत आदि दोपहर की कुछ मुख्य गतिविधियाँ होती हैं। बच्चों को पास के कला विद्यालय में ले जाया जाता है। ये बच्चे वार्षिकोत्सव अथवा अन्य कार्यक्रमों में भी भाग लेते हैं। उत्सवों एवं पर्वों के अवसर पर वे कार्ड आदि भी बनाते हैं।

5.2 प्राथमिक स्तर

प्राथमिक स्तर पर भी कला शिक्षा को सभी विषयों के साथ जोड़ा जाना चाहिए तथा विभिन्न अवधारणाओं को पढ़ाने के लिए एक माध्यम के रूप में इस्तेमाल करना चाहिए विशेषकर कक्षाओं I, II एवं III में। ठीक इसी तरह कक्षा I, II और आगे की कक्षाओं में भी बच्चों को विविध कला रूपों के द्वारा रचनात्मक गतिविधियों में लगाया जाना चाहिए तथा दृश्य एवं प्रदर्शनकारी कलाओं के लिए अलग-अलग कालांशों की व्यवस्था होनी चाहिए।

उच्च प्राथमिक स्तर पर कला शिक्षा के लिए मार्गदर्शक सिद्धांत

वस्तुओं के संबंधों के संदर्भ में अनुपातः

- बच्चों के पास की महत्त्वपूर्ण वस्तुएँ जिनका वे अनुभव करते हैं, उनके लिए वे बड़ी होती हैं। उदाहरणतः आँखें (जिससे वे देखते हैं), हाथ (स्पर्श करते हैं) पैर (जिनसे चल कर वे चीज़ें देखते हैं) वे उनके लिए अन्य वस्तुओं से महत्व के आधार पर छोटी या बड़ी होती हैं। एक फूल, घर से बड़ा भी हो सकता है क्योंकि बच्चा फूल को अपने हाथ में पकड़ सकता है न कि वह बच्चे को दबोच सकता है। कान, बाल अथवा मुँह इतने आवश्यक नहीं हैं अतः वे प्रायः गायब होते हैं (चित्रों में)।
- देखे हुए यथार्थ से जाना-पहचाना यथार्थ अधिक महत्वपूर्ण सिद्ध होता है। गाड़ी के चार पहिए बनाते हैं मगर दो ही दिखाई पड़ते हैं। दोनों ही दृष्टिकोण सही हैं।

विधियाँः

- बदलते पन्ने का माप एवं आकार (लंबवत्/समतल) उनके देखने का नज़रिया ही बदल देता है।
- स्केल का प्रयोग करने के लिए उत्साहित न करना। ड्राइंग बनाने का उद्देश्य एक वास्तुशिल्पीय ड्राइंग बनाना नहीं बल्कि एक अनुभूति का अभिव्यक्त किया जाना है अथवा यह रेखांकित की गई वस्तु का सारांश होता है। हाथों का सधा होना, तीव्र अवलोकन और यंत्रों का प्रचुर प्रयोग न करने इत्यादि को बढ़ावा देना चाहिए।
- रेखाचित्रों को भरने के लिए प्रेरित नहीं करना चाहिए। बनाई गई रेखाओं में फर्क होना चाहिए; उदाहरण के लिए एक पतली और शुद्ध रेखा हो सकती है तथा दूसरी मोटी और बहती हुई सी जो द्रव्यमान प्रदर्शित करती हो न कि रेखांकन। रेखा का प्रयोग दृश्य की भाषा है - चित्र निर्माण का एक विशिष्ट तत्व।
- कक्षा में सामूहिक रूप से कार्य करना एक अहम बात है। इसमें परस्पर योजना बनाने एवं बाँटकर कार्य करने को बढ़ावा देना चाहिए। इससे बच्चे एक निर्णय अथवा अनिर्णय की स्थिति तक पहुँचते हैं और पूरा समूह किसी कार्य के लिए उत्तरदायी होता है। यह समूह लंबवत् अथवा समतल हो सकता है। इससे बच्चों में गहन विश्वास पैदा होता है, एक दूसरे के काम एवं साधन को बाँटने एवं एक दूसरे के दृष्टिकोण का आदर करने की क्षमता विकसित होती है।

सामग्रियाँ एवं माध्यमः

- विद्यार्थी स्वयं अपना माध्यम निश्चित करने की प्रक्रिया में भाग लें। इससे सक्रिय प्रतिभागिता आती है।
- जब उनके पास माध्यम को चुनने का विकल्प हो तो चुनने की प्रक्रिया में बच्चे अपने पसंद की सामग्री चुनते हैं और प्रसन्नता का अनुभव करते हैं।
- एक से अधिक माध्यम को मिला कर किया गया कार्य अधिक आकर्षक होता है। इससे प्रत्येक माध्यम की जानकारी, विषमता एवं समानता ज्ञात होती है और अभिव्यक्ति के नए रास्ते दिखाई पड़ते हैं।
- कोलाज पुरानी रंगीन पत्रिकाओं, समाचार-पत्रों, कैलेंडरों इत्यादि से बनाया जा सकता है। यह बच्चों को असीम रंगों और शेड्स के चुनाव के अवसर देता है। इसे बनाने में कोई खर्च नहीं है। यह बच्चों में आकारों के प्रति एक गहरा बोध उत्पन्न करता है।

उद्देश्य

- आनंद का अनुभव।
- बच्चे को अपने आस-पास के माहौल जिसमें कक्षा, विद्यालय, घर और समुदाय सम्मिलित हैं स्वच्छ और सुंदर रखने के लिए कलात्मक विधाओं का प्रयोग करना सिखाना, जिसमें उन्हें आनंद आता हो।
- बच्चे को जीवन के विभिन्न पहलुओं पर अपने विचार और भावनाओं को स्वतंत्र रूप से अभिव्यक्त करना सिखाना।
- बच्चे में निरीक्षण, अन्वेषण एवं अभिव्यक्ति द्वारा सभी संवेदनाओं का विकास करना।
- अपने शरीर की गति संचालन एवं समन्वयन को समझने के योग्य बनाना।
- अपने क्षेत्र की स्थानीय और क्षेत्रीय कलाओं से परिचित कराना।
- श्वास एवं बाह्य अभिव्यक्ति से एक लयात्मक संवेदना विकसित करना।
- विभिन्न शास्त्रीय संगीत एवं नृत्य विधाओं को पहचानने के योग्य बनाना।

विषयवस्तु, विधियाँ एवं सामग्री

इस स्तर के बच्चों में अपने आस-पास के वातावरण से धारणाओं को खोज कर विकसित करने की क्षमता को बढ़ावा देना चाहिए। वे जो कुछ भी देखते हैं और जिसकी कल्पना करते हैं उन्हें अलग-अलग सामग्री एवं तकनीक से चित्रों, रेखांकन, कोलाज, मिट्टी इत्यादि में बनाने का प्रयत्न करते हैं जिसकी सराहना की जानी चाहिए। वे रंग, रेखा, डिजाइन आदि से कागज़ पर आकार बनाने की कोशिश करते हैं। इस स्तर के विद्यार्थियों के लिए छोटे-छोटे समूहों में उपलब्ध साधनों को बाँट कर कार्य करने के लिए प्रेरित किया जाना चाहिए। इससे इनमें सहयोग से काम करने की भावना आती है।

कक्षा I एवं II में बच्चों को सहजतापूर्वक विभिन्न आकारों एवं रंगों के बारे में बताना चाहिए और स्वयं उन्हें प्रयोग करने के लिए सामग्री के साथ छोड़ देना चाहिए जिससे वे स्वेच्छा से अपने आस-पास देखी गई वस्तुओं का चित्रण कर सकें। कक्षा III से उन्हें बनाने के लिए विषय दिए जा सकते हैं। प्राथमिक कक्षाओं तक अधिक निर्देश देने या नियम बताने से उनकी अभिव्यक्ति कुंठित होगी न कि बढ़ेगी। बच्चों को अपने क्षेत्र के कलाकारों, प्रदर्शनियों, ऐतिहासिक इमारतों, मेले आदि में ले जाना चाहिए जिससे वे उनके सामाजिक जीवन एवं विरासत से परिचित हो सकें। ये गतिविधियाँ उनके पाठ्यक्रम का ही एक हिस्सा होनी चाहिए। विद्यालय के वार्षिक सत्र में शिक्षकों और विद्यार्थियों को मिल कर कार्यक्रम करना चाहिए।

राष्ट्रीय गान एवं गीत, छोटी, साधारण कविताएँ (मातृ भाषा में) बच्चों को सामूहिक रूप से अभिनय के साथ सिखाई जा सकती हैं। देशभक्ति गीत, क्षेत्रीय भाषा के गीत जो पर्व-त्योहारों में पारंपरिक रूप से प्रचलित हों, सामुदायिक गायन इत्यादि उन्हें सिखाए जा सकते हैं। विद्यार्थियों को आधार, ताल, लय एवं सुर का ज्ञान भी कराया जा सकता है। स्वयं के शरीर के विभिन्न अंगों से लेकर आस-पास पाई जाने वाली वस्तुओं जैसे बर्तन, धागे, पत्ते, ड्रम आदि से निकलने वाली ध्वनियों के साथ भी वे प्रयोग कर सकते हैं।

कक्षा IV-V में वे सुर, ध्वनि, स्वर अवधि की पहचान सीख सकते हैं। संगीत एवं नाटक के खेल भी बच्चे खेल सकते हैं, जिसमें उन्हें आनंद की प्राप्ति होती है। क्षेत्रीय भाषाओं, लोरियों, कहावतों इत्यादि के माध्यम से भी उन्हें पढ़ाया जा सकता है। इस स्तर के शिक्षार्थी शुद्ध एवं विकृत स्वरों को भी पहचान सकते हैं, और उन्हें सरगम के साथ कुछ सरल अलंकार भी सिखाये जा सकते हैं।

6. दृश्य कलाओं की पाठ्यचर्या

6.1 उच्च प्राथमिक स्तर

विद्यालयी शिक्षा के इस स्तर पर विद्यार्थी थोड़े जटिल माध्यमों एवं विषयों पर कार्य कर सकते हैं। अभी

तक का उनका अनुभव एवं विकास इस स्तर में आकार लेता है।

उद्देश्य

इस प्रकार स्वतंत्र अभिव्यक्ति के अलावा अन्य उद्देश्य निम्न अनुसार होंगे:

- सम्मिलित रूप से छोटी या बड़ी परियोजना पर कार्य करना।
- विद्यार्थियों को स्वतंत्र अभिव्यक्ति एवं सृजनात्मकता के लिए प्रेरित करना।
- विद्यार्थियों को रूपांकन के मूल तत्वों एवं सिद्धांतों से अवगत कराना।
- विभिन्न तकनीकों, माध्यमों एवं उनके व्यावहारिक उपयोग तथा उनके मूल गुणों की समझ होना।
- सौंदर्य के प्रति संवेदनशीलता एवं उसके प्रयोग की समझ का विकसित होना।
- देश की विभिन्न पारंपरिक कलाओं को पहचानकर सांस्कृतिक विविधता देश में बची रहे, इसकी विद्यार्थियों में समझ होना।

विषय, विधियाँ एवं सामग्री

उच्च प्राथमिक स्तर में कला शिक्षा के अंतर्गत रेखांकन, चित्रकला, कोलाज, मिट्टी से काम, कठपुतली निर्माण, स्वतंत्र अभिव्यक्ति के विभिन्न तरीकों से कलात्मक वस्तुओं का निर्माण, दृश्य कला की सामान्य धारणाएँ, महान कलाकारों के कार्यों की जानकारी इत्यादि का समावेश होना चाहिए। अवलोकन और अन्वेषण के आधार पर विद्यार्थियों को अपनी कल्पना एवं अभिव्यक्ति के लिए इस स्तर पर प्रेरित किया जाना चाहिए। उनमें संगठन एवं रूपरेखा सज्जा की संवेदना विकसित होनी चाहिए जिससे उन्हें जीवनपर्यंत सौंदर्य का आनंददायी अनुभव प्राप्त हो सके।

रोजमर्रा की ज़िंदगी, प्रकृति तथा पर्यावरण से संबंधित घटनाओं को विद्यार्थी मानव और पशु-पक्षियों का चित्रांकन, स्वतंत्र रूप में रेखांकन, पुस्तकों के आवरण, कार्ड, फोल्डर, टाईस आदि के अभिकल्पन और रँगाई, छपाई और कशीदाकारी आदि के माध्यम से सीख सकते हैं। इस स्तर पर उनमें परिदृश्य, अनुपात, गहराई, छाया एवं प्रकाश, स्पर्श ग्राह्य अनुभव इत्यादि को द्वि-आयामी कला में पेंसिल, क्रेयॉन, जलरंगों, कोलाज़, पेन, ब्रुश आदि के माध्यम से दर्शाने की क्षमता आ जानी चाहिए। इस स्तर के विद्यार्थी लीनोकट एवं कंप्यूटर का भी प्रयोग कर सकते हैं। वे विभिन्न प्रकारों तथा आकारों के कागजों का प्रयोग कर सकते हैं। उन्हें छोटे अथवा बड़े समूहों में भी कार्य करने के लिए प्रेरित किया जाना चाहिए। उन्हें कार्यशाला, संग्रहालय तथा प्रदर्शनियों में ले जाने की सुविधाएँ उपलब्ध कराई जानी चाहिए। कला कक्ष के साधनों एवं सामग्रियों का संगठन विद्यार्थियों को करना चाहिए।

कार्मेल कॉन्वेंट सीनियर सेकेंड्री स्कूल, बी.एच.ई.एल., भोपाल की केस स्टडी

कार्मेल कॉन्वेंट विद्यालय न केवल विद्यार्थियों को पढ़ाई के लिए प्रोत्साहित करता है बल्कि उनमें सृजनात्मकता को भी विकसित करने का अवसर प्रदान करता है। अप्रैल के माह में यहाँ सत्रारंभ होता है जब विद्यार्थी परीक्षा के पश्चात् उन्मुक्त होकर नई कक्षा में आते हैं। इसी महीने से कला की विभिन्न गतिविधियाँ आरंभ होती हैं। उन्हें कुछ समसामयिक विषय चित्र बनाने के लिए दिए जाते हैं जिससे उनमें काल्पनिकता विकसित होती है। इसके लिए माध्यम की कोई सीमा नहीं होती। उन्हें अपनी पसंद के किसी भी माध्यम में कार्य करने की छूट होती है। दो महीने के ग्रीष्मावकाश के बाद जुलाई में विद्यालय पुनः खुलता है। जुलाई के महीने का विद्यालय के लिए अधिक महत्त्व है क्योंकि विद्यालय इस महीने में कार्मेल दिवस आयोजित करता है और संपूर्ण प्रांगण को तरह-तरह से सजाया जाता है।

अगस्त माह में जब रक्षा-बंधन का त्योहार आता है तब इस अवसर पर विद्यार्थियों को क्राफ्ट की कक्षा

में तरह-तरह की राखियाँ बनाना सिखाया जाता है। सितंबर-अक्टूबर में विज्ञान और हस्तशिल्प की प्रदर्शनी होती है जिसमें विद्यालय के हर स्तर के विद्यार्थियों की सृजनात्मकता के नमूने देखने को मिलते हैं। हाथ से बनी हर प्रकार की कलात्मक सामग्री जैसे चित्रकला, कढ़ाई-बुनाई, खिलौने, कागज़ के झोले, मृतिकाशिल्प आदि का प्रदर्शन होता है। अनेकानेक प्रतियोगिताएँ भी होती हैं जिनमें बर्तनों की सजावट, रंगोली, अल्पना, मेंहदी, पुष्प सज्जा, बेकार की वस्तुओं से बनी सामग्री आदि शामिल हैं।

इस विद्यालय में प्रत्येक वर्ष दिसंबर माह में क्रमशः वार्षिकोत्सव अथवा खेल-कूद प्रतियोगिता होती है। वार्षिकोत्सव में सजावट, मुखौटे बनाने, कपड़ों आदि सभी का कार्य विद्यार्थी अध्यापिकाओं के साथ मिलकर करते हैं। शीतकालीन अवकाश से पहले आखिरी दिन क्रिसमस का त्योहार बड़ी धूमधाम से मनाया जाता है जिसमें विद्यार्थियों द्वारा विभिन्न सांस्कृतिक कार्यक्रम आयोजित किए जाते हैं और वे सांता क्लाज़ के साथ आनंद उठाते हैं।

इसके बाद कक्षा XII के विद्यार्थियों की विदाई का कार्यक्रम भी बड़े ही कलात्मक ढंग से आयोजित किया जाता है। कनिष्ठ विद्यार्थी (कक्षा XI) अपने हाथों से प्रत्येक निमंत्रण पत्र बनाते हैं और विद्यालय की सजावट करते हैं। शिक्षक-दिवस के दिन (5 सितंबर को) विद्यार्थियों का अपने शिक्षकों के लिए प्रेम उनके द्वारा प्रस्तुत कार्यक्रमों एवं उनके लिए बनाए गए कार्ड में दिखाई देता है।

प्रत्येक कक्षा द्वारा की जाने वाली प्रार्थना में विद्यार्थी किसी विषय का चयन कर अपने विचारों को गायन, व्यंग्य रचनाओं तथा चार्टों द्वारा दर्शाते हैं। इससे विद्यार्थियों की कल्पनात्मक योग्यता में सुधार होता है। विद्यालय द्वारा विद्यार्थियों को अंतर्विद्यालयी प्रतिस्पर्धाओं में भी भाग लेने और विद्यालय के लिए ख्याति पत्र लाने के लिए प्रोत्साहित किया जाता है।

6.2 माध्यमिक स्तर

माध्यमिक स्तर पर विद्यार्थियों को दृश्यकला, संगीत, नृत्य अथवा नाटक में से किसी एक का चयन करने की स्वतंत्रता होगी जिसमें वे एक निर्धारित स्तर की दक्षता प्राप्त कर सकें।

उद्देश्य

- आनंद का अनुभव।
- अपने पूर्व के अनुभवों से सौंदर्यपरकता को अधिक परिष्कृत करना।
- लोक कलाओं, क्षेत्रीय कलाओं एवं अन्य सांस्कृतिक माध्यमों के द्वारा राष्ट्रीय विरासत एवं देश की सांस्कृतिक विविधता से विद्यार्थियों को अवगत कराना।
- विभिन्न यंत्रों, तकनीकियों एवं माध्यमों द्वारा द्वि एवं त्रि-आयामी दृश्य कलाओं में प्रयोग कर अपनी सृजनात्मक अभिव्यक्ति एवं कलात्मकता का विकास करना।

विषयवस्तु, विधियाँ एवं सामग्री

रेखांकन तथा चित्रकला

अवलोकन करना, अनुपात, परिदृश्य, गहराई, छाया-प्रकाश, स्पर्शग्राह्य अनुभव, ऋतुओं, समय तथा मनोदशा जैसे अपने मौलिक अनुभवों को मुक्त रूप से तत्काल अभिव्यक्त करना इस स्तर के शिक्षार्थी के लिए आवश्यक है। इस स्तर पर विषयों के चयन में, मानव शरीर की संरचना एवं उसके अनुपात, विभिन्न विषयों पर चित्र संयोजन, क्षेत्रीय कला परंपराओं आदि का ज्ञान इत्यादि कुछ महत्वपूर्ण विषय हैं। इन्हें ऐसी कार्य परियोजनाएँ दी जानी चाहिए जिनमें रचनात्मक अभिव्यक्ति एवं अनुभव हों, विभिन्न समूहों में कार्य हो, अंतर्विद्यालयी गतिविधियाँ हों, शिक्षा भ्रमण हो, समुदाय के कलाकारों से मिलना हो और आस-पास के क्षेत्र में प्रचलित लोक परंपराओं का ज्ञान हो। चित्र संयोजन के लिए दिए गए विषयों में उन मूल्यों की झलक हो जिसमें शिक्षा के अन्य मूल घटक जैसे सांस्कृतिक धरोहर, स्वतंत्रता संग्राम, राष्ट्रीय पहचान,

संवैधानिक दायित्व, प्रचलित सामाजिक मुद्दे, पर्यावरण की सुरक्षा आदि परिलक्षित होते हों। माध्यमिक स्तर के विद्यार्थियों को दो वर्ष की अवधि में कम से कम तीन माध्यमों में कार्य करने की आवश्यकता है। वे पेंसिल, पेस्टल, जल अथवा तैल रंग, पेन एवं इंक, लीनोकट अथवा कोलाज में से किन्हीं तीन माध्यमों का चयन कर सकते हैं।

मूर्तिकला

प्लास्टर ऑफ पेरिस, विभिन्न प्रकार की मिट्टी, पेपर मैशे, हाथ से बने बर्तन, सिरैमिक, रेखांकन का अभ्यास आदि कुछ माध्यम हैं जिनमें त्रि-आयामी कला की अभिव्यक्ति संभव है। विद्यार्थी घर अथवा विद्यालय के लिए या अपने लिए उपयोगी सामग्री भी बना सकते हैं।

सैद्धांतिक विषयवस्तु

प्रायोगिक कार्य के साथ इस स्तर पर थ्योरी भी पढ़ाई जानी चाहिए जिससे विद्यार्थियों को समकालीन कलाकारों के कार्य एवं विभिन्न कालों के कला इतिहास के बारे में जानकारी प्राप्त हो सके। विभिन्न शैलियों में हुए कला के ऐतिहासिक कार्य जिनमें उनकी रुचि जागेगी, उसका भी वे अध्ययन कर सकते हैं। उनमें कला की परख और कलाकारों की आलोचना/विवेचना, विभिन्न कालों में शैलीगत बदलाव आदि के प्रति जागरूकता आएगी। वे अपने कार्यों की भी विवेचना कर सकते हैं और दूसरों के कार्यों पर भी अपनी राय प्रकट कर सकते हैं। उन्हें समुदाय संबंधी परियोजना कार्य, संग्रहालयों में जाने और इंटरनेट के प्रयोग पर आधारित कार्य भी दिए जा सकते हैं।

पाठ भवन, शान्तिनिकेतन में कला-गतिविधियाँ

गुरुवर रवींद्रनाथ टैगोर की पुण्यतिथि पर प्रतिवर्ष श्रावण माह के 22वें दिन वृक्षारोपण का उत्सव होता है। इस अवसर पर एक पालकी में नर्तकों का एक जुलूस पौधों को लेकर चलता है जिसमें छतरी धारण करने वाले तथा विद्यार्थी प्रकृति के पाँच तत्वों का प्रतिनिधित्व करते हैं। जिस स्थान पर पौधा लगाया जाता है उसे अल्पना से सजाया जाता है। वैदिक मंत्रों के जाप, गीतों एवं पाँचों तत्वों की स्तुति के साथ पौधा लगाया जाता है। विद्यार्थी द्वारा फूल, पंखुड़ियों, कलियों एवं पत्तों से सजावट की जाती है और वे इन्हीं फूल, पत्तों आदि के आभूषण धारण करते हैं।

हलाकर्षन अथवा हल जोतने का अनुष्ठान प्रतिवर्ष श्रावण माह की 23वीं तिथि को किया जाता है। इस उत्सव की शुरुआत हल चलाने वाले स्थान को अल्पना से सजाकर की जाती है। दो सजे हुए बैलों को जोतकर हल चलाते समय वैदिक मंत्रों का संगीत के साथ उच्चारण किया जाता है। इस उत्सव के दिन से रवीन्द्र सप्ताह की शुरुआत होती है जो एक सप्ताह तक जारी रहता है। इस दौरान प्रत्येक संध्या को वार्ता, चर्चाएँ तथा कला-संस्कृति, साहित्य, शिक्षा, ग्रामीण पुनर्निर्माण जैसे विषयों पर टैगोर दर्शन से संबंधित कार्यक्रमों का आयोजन होता है, जिसमें प्रतिष्ठित व्यक्ति/विद्वान भाग लेते हैं।

प्रत्येक वर्ष श्रावण माह के 26वें दिन राखी पूर्णिमा का आयोजन होता है जब प्रत्येक विद्यार्थी नई-नई सामग्रियों और तरीकों से राखी बनाते हैं और वरिष्ठ विद्यार्थी इस बात का ध्यान रखते हैं कि किसी की भी कलाई बिना राखी के न हो।

15 अगस्त को स्वतंत्रता दिवस गान के साथ मनाया जाता है तथा अल्पना के अभिकल्पन के साथ सजाया जाता है जिसमें फूल-पत्ती, कई रंगों के घोल और चूर्ण इस्तेमाल किए जाते हैं। शाम के समय यह क्षेत्र चारों तरफ़ रोशनियों से सजाया जाता है और स्कूल और कॉलेज के विद्यार्थी राष्ट्र-भक्ति के गीत गाते हैं।

5 सितंबर को शिक्षक दिवस के दिन विद्यार्थी शिक्षण का कार्य करते हैं, प्रदर्शनी आयोजित करते हैं तथा स्थान विशिष्ट को मौसमी फूलों की पंखुड़ियों से अल्पना बनाकर सजाते हैं। खेलकूद गतिविधियों में शिक्षक तथा विद्यार्थी साथ ही भाग लेते हैं और शाम को शिक्षक विद्यार्थियों के लिए एक विशेष कार्यक्रम का आयोजन करते हैं।

मौलिक नाट्यशास्त्र में भाग लेने से बच्चे को क्या लाभ होता है?

आनंद!–बच्चे आनंद प्राप्त करते हैं, नाटक जैसा शब्द गहरे अर्थ में समझा जाए तो यह आनंद देता है बाल्यावस्था खेलने के लिए होती है - चाहे वह अपने साथियों के साथ, पालतू पशुओं के, वयस्कों अथवा वास्तविक जीवन के साथ हो... नाटक की ऐसी प्रक्रिया के माध्यम से बच्चे कदम-कदम पर एक ढाँचाबद्ध तरीके से जगत में व्याप्त वस्तुओं की खोज और उनका अनुभव करते हैं। इसके अतिरिक्त नाटक की और बहुत-सी उपयोगिताएँ हैं; इससे स्व-अभिव्यक्ति का मार्ग प्रशस्त होता है और कल्पनाशीलता का बोध होता है, इससे सामाजिक एवं बौद्धिक (विशेषकर रोल प्ले से) जागरूकता आती है, बच्चे की अभिव्यक्ति और वाणी विकसित होती है, आत्म-ज्ञान, स्वाभिमान एवं स्वयं पर विश्वास का बोध होता है। इससे बच्चों को दूसरे के साथ सहकारिता से कार्य करना, एक-दूसरे की मदद करना आता है और विचारों के तालमेल एवं संगठन की क्षमता विकसित होती है। नाटक से एक प्रकार की अनुशासनशीलता आती है। एक निश्चित अवधि में किसी कार्य को किस प्रकार संपन्न किया जा सकता है और एक समूह में कैसे प्रस्तुत किया जा सकता यह बच्चे अति शीघ्र सीख लेते हैं। इसके लिए सुनने, समस्या को सुलझाने, समय प्रबंध, नेतृत्व और साधनों को एकत्रित करने की दक्षता आनी चाहिए। नाटक में भाग लेने से भौतिक एवं शारीरिक स्वस्थता रहती है। इसका उपचारक प्रभाव भी होता है जिससे वे यथार्थ जीवन में (सामाजिक नाटक) दूसरों की समस्याओं का समाधान करने में सक्षम होते हैं, अथवा अपने भीतर में छिपे हिंसा एवं कुंठा तत्वों (मनोवैज्ञानिक नाटक) को नाटक के माध्यम से निकाल कर शांति (अंत:) स्थापित करने में सहायक होते हैं। नाटक से सामाजिक एवं नैतिक प्रशिक्षण भी प्राप्त होता है और यह युवाओं को भावनात्मक रूप से परिपक्व होने में मददगार साबित होता है। इससे विद्यार्थी भविष्य के लिए जटिल भूमिका निभाने के लिए तैयार होते हैं।

इस प्रक्रिया के मूल में है - बच्चे के प्रति सम्मान, उसकी भावनाओं, संवेदनात्मक स्थिति और उसके विश्वास के साथ-साथ वह स्वयं कार्य को अंजाम देने की योग्यता रखता है तथा इसका सम्मान करता है। नाटक में शिक्षक को कभी बच्चे के सामने यह प्रदर्शित नहीं करना चाहिए कि भूमिका कैसे निभाई जाए। इससे बच्चे के अंदर की मौलिकता (बोलने या चलने की) सीमित हो जाती है और उसका विकास समाप्त हो जाता है। बच्चों को अपने अंदर छिपी शक्तियों का नाटक के जरिए जानने की स्वतंत्रता दी जानी चाहिए। इससे उनमें प्रयोग के माध्यम से सीखने की प्रेरणा जागृत होती है। इससे उन्हें वैयक्तिक तौर से अभिव्यक्ति का अवसर प्राप्त होता है। इस तरह से वे जो करते हैं उसका आनंद कैसे उठाएँ, यह सर्वोपरि है।

भाद्र माह के 31वें दिन प्रतिवर्ष शान्तिनिकेतन में शिल्पोत्सव का आयोजन होता है। हस्तशिल्प प्रदर्शनी आयोजित की जाती है। विश्वकर्मा पूजा के समान ही यह उत्सव पारंपरिक हस्तकला एवं शिल्पकारों के सम्मान में मनाया जाता है।

आनंद मेला एवं महालय आश्विन माह के 8वें दिन विद्यालय परिसर में होता है। इसके लिए, हर कक्षा के विद्यार्थी छोटी-बड़ी वस्तुएँ बनाते हैं जो विभिन्न प्रकार की सामग्रियों से बनी होती हैं। विद्यार्थियों (आठ या उससे ज्यादा) के समूह छोटी दुकानें सजाते हैं और उनमें

लगे पोस्टर स्वयं बनाते हैं और उनकी बिक्री का हिसाब भी रखते हैं। यहाँ के विद्यार्थी बेकार अथवा पड़ी हुई सामग्री से कैलेंडर, कार्ड, चित्र, यहाँ तक कि स्वयं अपने लेखों, कविताओं, कहानियों और चित्रों के संग्रह कर पत्रिका निकालते हैं।

महर्षि देवेंद्रनाथ टैगोर के नाम पर *देखा दिवस* के नाम से यह उत्सव प्रतिवर्ष दिसंबर के अंतिम सप्ताह में मनाया जाता है। छातिम ताल के नीचे पहले दिन सुबह गायन, वादन, वार्ता आदि के कार्यक्रम का आयोजन किया जाता है। छातिम वृक्ष के चारों ओर का क्षेत्र अल्पनाओं से सुसज्जित होता है जिसे कला भवन के विद्यार्थी बनाते हैं। यह उत्सव ब्रह्मो धर्म के लिए मनाया जाता है। पौष उत्सव 3-4 दिन तक चलता है। इस दौरान आस-पास के क्षेत्र के कलाकार और शिल्पकार विभिन्न सांस्कृतिक कार्यक्रमों एवं प्रदर्शनियों में भाग लेते हैं।

विश्व भारती का स्थापना दिवस एवं विद्यालयों का दीक्षान्त समारोह प्रतिवर्ष पौष माह की 8वीं तिथि को मनाया जाता है। दीक्षान्त समारोह वाले क्षेत्र को एक बहुत बड़ी अल्पना से सजाया जाता है जिसे बनाने में विद्यार्थियों को 3 से 4 दिन लग जाते हैं।

क्रिस्तुत्सव अथवा क्रिसमस 24 दिसंबर को मनाया जाता है। शाम के समय उपासना सभागार को अल्पना एवं मोमबत्तियों से सजाया जाता है। भक्ति गीतों, कैरोल गानों तथा प्रवचन से भरी इस संध्या की बात ही कुछ और है।

माघ माह के छठे दिन *महर्षि स्मरण* महर्षि देवेंद्रनाथ टैगोर की पुण्यतिथि के रूप में मनाया जाता है। उस दिन प्रातः सांस्कृतिक कार्यक्रम उपासना सभागार में तथा अपराह्न अथवा संध्या काल में छातिम ताल के नीचे आयोजित किए जाते हैं।

श्रीनिकेतन वार्षिकोत्सव (वार्षिक समारोह) माघ माह के 23-25वें दिन को आयोजित होता है। इस कार्यक्रम में 23वें दिन को श्रीनिकेतन के स्थापना दिवस के रूप में मनाया जाता है। स्थानीय कलाकार और शिल्पकार प्रदर्शनी आयोजित करते हैं। इस क्षेत्र को अल्पना से सजाया जाता है।

वसन्त उत्सव (डोल या होली) का पर्व फाल्गुन के 22वें दिन मनाया जाता है। इस दिन विद्यार्थी स्वयं पारंपरिक कपड़ों को पीले रंग से रँगते हैं और उन्हें पहनकर सूखे रंग से होली खेलते हैं। विद्यार्थी पलाश के फूल एवं पत्तों से आभूषण बनाते हैं और नाचते-गाते हुए वसंत ऋतु का स्वागत करते हैं।

गाँधी पूर्णाहो प्रतिवर्ष 10 मार्च को मनाया जाता है, पूरे क्षेत्र (आश्रम विद्यालय और महाविद्यालय) और साथ ही हॉस्टल क्षेत्र की भी विद्यालय और महाविद्यालयों के विद्यार्थियों द्वारा साफ-सफाई की जाती है।

बंगाली वर्ष के अंतिम दिन चैत्र की 30 तारीख को उपासना सभागार (मंदिर) में शाम को मनाते हैं। नए वर्ष को गुरु रवींद्रनाथ ठाकुर के जन्म दिवस के रूप में वैशाख माह के प्रथम दिन को सुबह में उपासना कक्ष में गायन आदि से प्रारम्भ करते हैं। शाम को XI वीं के विद्यार्थियों द्वारा नाटिका प्रस्तुत की जाती है जिसकी वेशभूषा एवं मंच सज्जा भी विद्यार्थियों द्वारा की जाती है। इस नृत्य-नाटिका की तैयारी में वे करीब एक महीने से लगे रहते हैं। प्रत्येक बुधवार को सुबह उपासना गृह में विद्यार्थियों के लिए प्रार्थना सभा का आयोजन होता है। टैगोर की कृतियों के लेख का पाठ किया जाता है। संगीत के साथ वैदिक मंत्रों का भी पाठ किया जाता है।

6.3 उच्चतर माध्यमिक स्तर

उच्चतर माध्यमिक स्तर (कक्षा XI, XII) में ललित कला एक वैकल्पिक विषय के रूप में विद्यार्थियों द्वारा लिया जा सकता है। संसाधनों की उपलब्धता के आधार पर प्रत्येक विद्यालय को इसके लिए सुविधाएँ तथा साध न उपलब्ध कराने चाहिए। पाठ्यचर्या में ललित कला का विषय, चित्रकला, मूर्तिकला या ग्राफिक्स भी हो सकता है जिसमें 30% सैद्धांतिक एवं 70% प्रायोगिक कार्य का प्रावधान रखा जाना चाहिए। इस स्तर पर कला के

इतिहास एवं सौंदर्यशास्त्र जैसे विषयों के सिद्धांतों को भी पाठ्यक्रम में शामिल किया जाना चाहिए।

उद्देश्य

ज्ञान और सृजनात्मकता के प्रति जागरूकता लाने की अपेक्षा शिक्षा के इस स्तर पर विषय की व्यावसायिकता एवं व्यावहारिकता पर अधिक बल दिया जाना चाहिए जिससे कक्षा VIII तक उसके स्वभाव में व्यापकता आए। इस स्तर पर यह एक अनुशासित विषय के रूप में पढ़ाया जाना चाहिए। अत: इसके अध्यापन उद्देश्य निम्न होंगे:

- पहले प्राप्त की गई दक्षता को तीक्ष्ण बनाना।
- ललित कलाओं में व्यावसायिक दक्षता का विकास।
- रूपांकन का परिप्रेक्ष्य विकसित करना।
- विद्यार्थी को स्वयं को चुनिंदा शैली और माध्यम से अभिव्यक्त करने में मदद करना।
- भारत एवं विश्व की कला के संदर्भ में ऐतिहासिक आयाम विकसित करना।
- कार्य करने में आनंद का अनुभव करना।1

विषय वस्तु, विधियाँ एवं सामग्री

अपनी कल्पना और अनुभव के आधार पर विचार विकसित करना, अवलोकन करके तथा रेखांकन के माध्यम से एकत्रित की गई सामग्री को उचित स्थान पर भिन्न जरूरतों और दर्शकों के लिए प्रयोग में लाने पर जोर देने की कोशिश होनी चाहिए। अब उन्हें कई तरह की सामग्रियों, उपकरणों, तकनीकियों तथा प्रक्रियाओं के साथ काम करना आना चाहिए (जैसे ड्राइंग, डिज़ाइनिंग तथा प्रिंट मेकिंग)। इन सबको मिलाकर और इनमें थोड़ा बहुत बदलाव लाकर प्रभाव प्राप्त किया जा सकता है। अपने तथा दूसरों के कार्यों की समीक्षा अपने कार्य के आगे विकास के लिए फीडबैक आवश्यक है। इसके अतिरिक्त इस स्तर पर पश्चिमी यूरोप और विस्तृत विश्व में विविध कालों के कला, क्राफ्ट और डिज़ाइन को पहचानने की क्षमता विकसित हो जानी चाहिए।

7. प्रदर्शनकारी कलाओं की पाठ्यचर्या

7.1 नाटक

स्वभाव से ही बच्चे खोजी प्रवृत्ति के होते हैं और जल्दी किसी बात पर विश्वास नहीं करते। वे बिना बड़ों के सहयोग लिए विचारों को प्रयोग करते हुए अपने नाटक को खेल सकते हैं। इस नाटक के माध्यम से विद्यार्थी धीरे-धीरे बड़ों की दुनिया में शामिल हो जाते हैं। वे स्थितियों से यह पता लगाते हैं कि वे कैसा महसूस करते हैं।

नाटक एक सृजनात्मक गतिविधि है। इसके माध्यम से व्यक्ति अपने विचारों को प्रकट कर सकता है और विभिन्न परिस्थितियों का मूल्यांकन कर सकता है। इस प्रक्रिया में अस्पष्ट विचारों का विकेंद्रीकरण हो जाता है, दुविधाजनक विचार समझ में आ जाते हैं और टूटे-फूटे विचार पूर्ण हो जाते हैं। नाटक, अन्य सृजन कलाओं की तरह ही व्यक्ति को अपने विचारों एवं अनुभवों का परीक्षण करने के लिए बाध्य करता है। काल्पनिक दृष्टिकोण प्रेरित होता है और हमें अपने आसपास के संसार की अधिक गहराई से समझ आती है। मानव की यह मूल इच्छा नाटक के माध्यम से आदिकाल से ही पूर्ण हुई है। नाटक अपने आप में एक विकसित कला है।

शिक्षा के प्रारंभिक वर्षों (I-VIII तक) में नाटक एक सीखने की विधा, समाजीकरण की प्रक्रिया और कला के एक रूप में देखा जाता है। जैसे-जैसे बच्चे शिक्षा के अगले चरणों की ओर अग्रसर होते हैं, विशेषकर माध्यमिक एवं उच्च माध्यमिक स्तरों की ओर, नाटक प्रदर्शन कला की एक संगठित गतिविधि का स्वरूप ले लेता है जहाँ सामूहिक रूप से विद्यार्थी एक लक्ष्य की ओर बढ़ते हैं। नाटक के माध्यम से बच्चों को मनोवैज्ञानिक रूप से मुक्त अभिव्यक्ति एवं कल्पना का अवसर प्राप्त होता है। इस प्रक्रिया की परिणति एक नाटक के रूपांतरण एवं आमंत्रित श्रोताओं के समक्ष प्रस्तुतीकरण से होती है।

स्कूली शिक्षा के भिन्न स्तरों पर नाटक	
XI-XII	औपचारिक एवं संगठित नाटक
IX-X	नाटक (नाटक एक प्रदर्शनकारी कला के रूप में)
VI-VIII	तत्काल रचना (आशु रचना)
I-V	मुक्त नाटक (रचनात्मक नाटक के तत्व में)

मौलिक नाटक सही एवं गहन अर्थों में रूढ़िबद्ध नहीं हो सकता। वह एक बहती नदी के समान है–हमेशा बहती हुई–जोड़ता हुआ–नदी के तटों को जोड़ता हुआ; उद्गम और गंतव्य बिंदुओं को जोड़ता हुआ, इम्प्रोवाइजेशन, क्रिया और प्रतिक्रिया के माध्यम से जोड़ता हुआ, पहल और प्रतिक्रिया, विचार और भाव; लोगों से और विचारों से संबंध यहाँ तक कि शताब्दियों से!

–जूली टॉमसन

7.1.1 उच्च प्राथमिक स्तर

प्राथमिक एवं उच्च प्राथमिक स्तर पर नाटक सीखने के उद्देश्य आधुनिक शिक्षा के उद्देश्यों के ही समान हैं, जैसे मौलिकता/सृजनात्मकता एवं सौंदर्यबोध का विकास, आलोचनात्मक विचारधारा, सामाजिक विकास, सहकारिता, संचार, दक्षता, मूल्यों का विकास और सर्वोपरि स्वयं का ज्ञान होना। बच्चे उन्मुक्त वातावरण में प्रसन्न होकर विभिन्न अनुभवों के आधार पर ज्ञान का निर्माण करते हैं जो एक परंपरागत कक्षा में संभव नहीं है।

उद्देश्य

उच्च प्राथमिक स्तर पर नाटक सीखने के मुख्य उद्देश्य ये हैं :

- संगठन की चेतना, अवलोकन करने की क्षमता और बच्चों में एकाग्रचित्त होने को बढ़ावा देना।
- कल्पना शक्ति को एवं आत्म-अन्वेषण को बढ़ावा देना।
- बच्चों को शारीरिक गतियों से स्वयं के विचार बनाने, ज्ञान की उत्पत्ति एवं संगठन में सहायता देना।
- उनमें मानव संबंधों एवं उनके संघर्ष को समझने की योग्यता का विकास करना।
- विद्यालय में शांति एवं सौजन्य का वातावरण बनाए रखने के लिए नाटकों का प्रयोग करना।

विषय

- श्वास क्रियाएँ तथा शरीर की भौतिक गतिविधियाँ (संगीत के साथ और बिना संगीत के)।
- अवलोकन, ध्यान, विश्वास, ज़िम्मेवारी, कल्पना, शब्दों एवं भाषा पर आधाारित विभिन्न प्रकार के नाट्य खेल।
- अभिनय के साथ जोर-जोर से कविता एवं कहानी पढ़ना।
- वृत्तांत एवं कथा वाचन।
- विभिन्न प्रकार की ध्वनियों, लय, तालियों एवं आस-पास उपलब्ध अन्य पदार्थों से मनुष्य द्वारा निकाली गई ध्वनियों के ऊँचे-नीचे स्वरों को पहचानना।
- मूक अभिनय एवं स्वाँग।
- छोटे नाटक और स्किट्स।
- अपने नगर अथवा आस-पास होने वाले मंचन को देखना, उसकी सराहना एवं मूल्यांकन करना।

बच्चों को अपने क्षेत्र की लोक नाट्य परंपराओं के बारे में जानने के लिए प्रेरित करना चाहिए। रामलीला, रासलीला एवं अन्य उत्सवों के मंचन को देखने के लिए उन्हें प्रोत्साहित करना चाहिए जिसकी वे कक्षा में आकर अन्य विद्यार्थियों से चर्चा करें विशेषकर प्रदर्शन में विभिन्न भूमिकाओं, उनकी जीवन शैली, आंतरिक समस्याओं, रुचि इत्यादि जो उन्होंने देखी है और जिससे वे अपने आस-पास के जीवन को समझेंगे।

विधि

नाट्य कला में व्यक्तिगत एवं सामूहिक दोनों ही प्रकार के कार्य होते हैं। अत: इसकी अध्ययन प्रणाली कार्यशाला

के रूप में फायदेमंद होगी जिससे कक्षा का प्रत्येक विद्यार्थी उसकी हर गतिविधि में भाग ले सके। यहाँ शिक्षक की भूमिका एक मध्यस्थ एवं उत्साहवर्धक व्यक्ति की होती है। बच्चों को विभिन्न प्रकार के स्वतंत्र कार्य दिए जाने चाहिए जिन्हें वे व्यक्तिगत और सामूहिक तौर पर ले सकें।

7.1.2 माध्यमिक स्तर

नाटक किसी भी व्यक्ति के लिए एक अत्यंत समृद्ध करने वाला अनुभव होता है। इससे न केवल उसके जीवन के अनुभवों का विस्तार होता है बल्कि जीवन में आने वाली अनेक वास्तविक समस्याओं का सामना करने की दक्षता भी विकसित होती है। मुझे विश्वास है कि युवा लोगों के अनुभव की गुणवत्ता ही मानवीय गरिमा की जड़ है।

–डॉ. ली सॉक

उद्देश्य

माध्यमिक स्तर बच्चों के जीवन में परिवर्तन का काल होता है, वे किशोरावस्था में होते हैं तथा वयस्क होने की तैयारी कर रहे होते हैं। अत: नाटक अध्ययन के उद्देश्य उनकी बदलती मनोवैज्ञानिक जरूरतों को विशेषकर उनकी स्वयं की पहचान पर केंद्रित होने चाहिए। अत: इन बातों को ध्यान में रखकर ही नाट्यशिक्षण में निम्न उद्देश्यों का निर्धारण किया गया है:

- आत्मबोध एवं अभिव्यक्ति का पोषण करना।
- सौन्दर्य शास्त्रीय जागरूकता उत्पन्न करना तथा कल्पना का विकास करना।
- गतिविधियों एवं भाषणों में विश्वास बढ़ाना।
- ध्यान को शक्तिशाली बनाना और विचारों की तर्कसंगत व्याख्या करके विश्लेषणात्मक विचार करने की शक्ति को विकसित करना।
- समाज में एक-दूसरे के प्रति सहिष्णुता एवं संवेदनशीलता का विकास; एवं सृजनात्मक अभिव्यक्ति के माध्यम से अपने तथा औरों के प्रति उपयुक्त अभिवृत्ति विकसित करना।
- जीवन के भीतरी एवं बाहरी संघर्ष को समझकर उसका निवारण करने में समर्थ होना।
- अन्य विषयों के अध्ययन के अनुभव को नाटकीय विधा में शामिल करना।

विषयवस्तु

अग्रिम स्तर के नाट्य खेल जैसे, साधित रूपों का समूह एवं नेता, परस्पर विरोधी भावनाओं का अभिनय (हँसना और रोना), संगीत पर प्रतिक्रिया व्यक्त करना, स्मरण करने वाले खेल जैसे अभिनय/शब्द आदि, कहानी कहना, और भूमिका निर्वहन, विषयों और कहानियों के साथ विभिन्न प्रकार के लय तात्कालिक भाषण इत्यादि।

- शारीरिक भाषा : समाज के विभिन्न वर्गों से संबंधित मनुष्य-जीवन के कई स्तरों पर प्रयुक्त इशारों और मुद्राओं को देखना और समझना, किसी विशिष्ट चरित्र के रूप में शरीरिक भावपूर्ण प्रकटीकरण।
- वाणी एवं कथन: वाणी के संयम, उच्चारण, प्रक्षेपण तथा अभिव्यक्ति का अभ्यास। अँग्रेजी, हिंदी और मातृभाषा इत्यादि से भाषायी पाठ से लिए गए अंशों की भाषण संबंधित गतिविधियाँ (भाव के साथ ज़ोर से पढ़ना), रुचिकर समाचार एवं भारतीय शास्त्रीय साहित्य/लोक कथाएँ इत्यादि, पारंपरिक तरीकों से कहानी कहना और विवरण संबंधित गतिविधियों का अभ्यास।
- सौंदर्यपरक सराहना : विभिन्न समूहों द्वारा विविध रंगमंचीय कार्यक्रमों का प्रदर्शन। प्रदर्शनों की समीक्षा और विवेचना; स्वयं के विकास का मूल्यांकन प्रतिदिन चिंतन द्वारा, अपने-अपने अनुभव को सुरक्षित रखना और उसे 'जर्नल' में प्रकाशित करना।
- नाट्य निर्माण: इम्प्रोवाइजेशन के माध्यम से विषयवस्तु का निर्माण कर छोटा-सा नाट्य रूपान्तरण करना।
- मंच सज्जा : भिन्न प्रकार के मंच सज्जा की जानकारी और उपयोग अर्थात् वेशभूषा और सजावट, ध्वनि एवं संगीत, रोशनी एवं मंच विन्यास आदि।

विशेष आवश्यकताओं वाले बच्चों के साथ नाटक

विशेष आवश्यकताओं वाले बच्चों के लिए 'नाटक' शिक्षा एवं उपचारी दोनों प्रकार का होता है। नाटक की संपूर्ण सृजनात्मक प्रक्रिया में 'किसी दूसरे' की कल्पना की जाती है जिसमें नृत्य, संगीत, कथन एवं अभिनय सभी का समावेश होता है जो प्राय: विशेष आवश्यकताओं वाले बच्चों के शैक्षिक अनुभव में छूट जाता है। नाटक एक ऐसा माध्यम है जिसमें ये बच्चे क्या कर सकते हैं और क्या नहीं इस धारणा से मुक्त होने की अत्यधिक सम्भावना है।

एक ऐसा आलेख तैयार करना जिसमें ऐसे बच्चों की काबिलियत पूर्णतया निखर सके, इस क्षेत्र में कार्य करने वालों के लिए सबसे बड़ी चुनौती है। ऐसे बच्चे जो पहिए वाली कुर्सी पर चलते हों अथवा जिनकी सीमित गतिविधियाँ हों (स्पॉस्टिक हों) अथवा देख न सकते हों या जिन्हें बोलने में परेशानी होती हो उन सभी को एक मंच पर पेश करना अत्यधिक कठिनाई का कार्य है। जानवरों पर आधारित कहानी इस स्थिति में कामयाब होती है जिसमें पहिए वाली गाड़ी पंखुडियों में बदली जा सकती है अथवा पक्षियों की पंखों में... जो बोल नहीं सकते उन्हें नृत्य का अवसर प्रदान कर अथवा अपने ढंग से संगीत की लय पर घूमने का एवं जो बोलने में तेज हों उन्हें संवाद के लिए प्रेरित कर नाट्य मंचन करवाया जा सकता है।

सर्वप्रथम, कहानी को छोटे भागों में बाँट कर उसे थोड़ा-थोड़ा उन्हें समझाया जाए जिससे वे विषय एवं चरित्र से परिचित हो सकें और तारतम्य के तार को जान सकें। इन बच्चों के सीमित अनुभवों को नजरअंदाज नहीं किया जाना चाहिए। उनमें से कई बच्चे बहुत से पशु-पक्षियों से परिचित नहीं होते हैं अत: उन्हें उनका ज्ञान भी देना पड़ता है तभी अभ्यास शुरू हो सकता है।

उचित होगा कि छोटी-छोटी घटनाओं का अलग-अलग अभ्यास किया जाए और जब एक स्थिति स्पष्ट हो जाए तभी दूसरे का अभ्यास शुरू किया जाए। 8-9 सप्ताह के बाद ही नाटक की आकृति स्पष्ट होती है और बच्चे उसे करने में आनंद का अनुभव करते हैं। बच्चों के नाटक में हास्य (शारीरिक एवं वाचिक) आवश्यक है। मंचन के दिन वे सभी उत्साहपूर्वक भाग लेंगे क्योंकि उनमें से बहुतों के लिए ये पहला अवसर है जिसका उन्हें बेसब्री से इंतजार है।

- रंगमंचीय शिष्टाचार : विविध मंचीय प्रस्तुतियों और स्थानीय प्रदर्शनों का उद्घाटन; नाटक के दौरान आत्म-नियंत्रण के नियमों को सीखना जैसे नाटक के शुरू होने से पहले अपनी सीट ग्रहण करना और उस दौरान खाने की सामग्री, पेजर और मोबाइल फोन का प्रयोग न करना इत्यादि।

विद्यार्थियों को प्रदर्शनियों, नाट्य मंचन में जाने एवं भारतीय पारंपरिक लोक कलाओं की सराहना करने के लिए प्रेरणा दी जानी चाहिए। स्थानीय रंगमंच के प्रसिद्ध नाट्य कर्मियों को विद्यालय में बुला कर विद्यार्थियों के साथ परस्पर बातचीत का सत्र और उन प्रदर्शनों पर एक आलेख पढ़ना चाहिए। सत्र के अंत में विद्यार्थियों को स्वमूल्यांकन द्वारा अपना आकलन करना चाहिए।

विधि

- कार्यशाला के ढंग को अपनाना चाहिए जिसमें सहभागिता की प्रवृत्ति हो।
- साथियों से सीखा जाए इसके लिए सामूहिक कार्यों के लिए प्रेरित किया जाना चाहिए।
- जहाँ भी ज़रूरत हो पूरे समूह की सहमति का कठोरता से पालन करना चाहिए।

- शिक्षक में सरलकर्ता से हस्तकौशलकर्ता या योग्य बनाने वाले तथा तात्कालिक परिस्थितियों के अनुरूप स्वत: स्फूर्त रूप से बदलने की क्षमता होनी चाहिए।

माध्यमिक स्तर पर नाटक-कक्षा में शिक्षक की भूमिका अत्यंत महत्वपूर्ण होती है। उन्हें अपनी चित्तवृत्ति के परिवर्तन के प्रति सजग रहना चाहिए। अपनी प्रतिक्रियाओं एवं स्व चिंतन का भी समूह के अनुसार विकास करना चाहिए। उन्हें खुद को सुधारने के लिए निरंतर अपनी भावनाओं एवं संवेदनाओं को डायरी में दर्ज करना चाहिए जिससे हर दिन के साथ वे बेहतर शिक्षक होते जाएँ।

नाटक के माध्यम से संवेदनशीलता का पिरामिड

किसी भी कला का चरम उद्देश्य है 'आत्म अनुभूति'–जानना, अवलोकन, बोध और उसका विकास–एक जिंदादिल और विकसित जागरूक व्यक्तित्व।

आत्म अनुभूति: सत्य की खोज

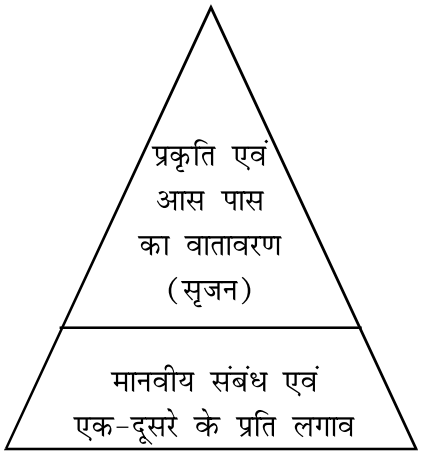

अपनी एवं दूसरे की संवेदनशीलता

कला रूप

1. सौंदर्य शास्त्रीय मूल्य (सुंदरता एवं सामंजस्य)
2. शैक्षिक मूल्य (ज्ञान, दक्षता एवं विधि)
3. आध्यात्मिक अनुभव (उच्चतम)
   (ललित एवं प्रदर्शनकारी कलाओं सहित)

मानव प्रकृति के परिष्कृत रूप का न्यूनतम से अधिकतम शक्ति के रूप में संवर्धन

7.1.3 उच्चतर माध्यमिक स्तर

उद्देश्य

- स्वयं के प्रति, दूसरों के लिए एवं अपने पर्यावरण के प्रति संवेदना का विकास।
- विद्यार्थी स्वयं की गहरी समझ के माध्यम से अपने व्यक्तित्व को समझ पाएँ इसमें सहायता देना।
- अवलोकन, एकाग्रचित्तता, तार्किकता, कल्पनाशीलता एवं विश्लेषण शक्तियों के संवर्धन में शिक्षार्थियों के लिए सहायक सिद्ध होना।
- नाट्य शास्त्र की विभिन्न विधाओं की समझ होना।
- विद्यार्थियों को नाटक से एक कला के रूप में परिचित कराना, उसमें उपस्थित सौंदर्यपरकता की समझ देना एवं उसकी सराहना करना सीखना।

- भारतीय कला एवं संस्कृति का ज्ञान एवं उसके प्रति सम्मान की भावना जागृत करना।
- विद्यार्थियों को भविष्य के लिए तैयार करना जिसमें वे मानव जीवन की बेहतर समझ एवं सामंजस्य स्थापित कर सकें।

विषयवस्तु

अ) अभिनय

नाट्य खेल एवं इम्प्रोवाइजेशन

- शरीर के विकास, व्यक्तित्व, शरीर संतुलन, पाँचों इंद्रियों का विकास, योगिक आसन एवं ध्यान योग से उन्नत भौतिक एवं मानसिक अभ्यास का चयन करना।
- अभिनय की अवधारणा; अभ्यास के माध्यम से भाव, रस और अभिनय की अवधारणा की समझ होना।
- मुखाभिव्यक्ति, शारीरिक गतिविधि की विविधता एवं नाटक पढ़ने का अभ्यास।
- मुद्राओं एवं भंगिमाओं के अभ्यास का चयन करना।

वाणी एवं कथन (लिखित एवं प्रायोगिक कार्य)

- वाणी उत्पन्न करने की प्रक्रिया को समझना, श्वास प्रणाली, श्वास विकसित करना एवं श्वास लेने की विधि के सही तरीके एवं प्रतिध्वनि उत्पन्न करने की विधि जानना।
- वाणी, प्रबलता, तान, प्रक्षेपता, सप्तक आदि का विकास।
- कथन की विभिन्न त्रुटियों को समझना और उसका बचाव।

  अच्छे कथन का अभ्यास–गद्य, पद्य, वार्तालाप, नाट्य पाठ आदि।

ब) नाट्य शास्त्र का साहित्य एवं नाट्य मंचन

- नाटकीय रूपरेखा, चरित्रों का विकास, नाटक प्रक्रिया, नाटक का विश्लेषण, समीक्षा एवं आलोचना
- उत्पादन की प्रक्रिया
- विभिन्न प्रकार के, विशेषकर भारतीय नाट्य मंचन की लघु समीक्षा।

स) मंच तकनीक

- मंच सज्जा के मूल तत्वों को समझना, वेशभूषा सज्जाकार और मंच निर्माता का महत्त्व, एवं नाटक की परिकल्पना तथा शोध
- नाटक के मंचन के अनुरूप संगीत एवं ध्वनि प्रभाव की खोज
- मंचन हेतु प्रकाश का प्रभाव एवं विभिन्न प्रकार की प्रकाश प्रक्रिया एवं उपकरणों का ज्ञान होना।

द) रंगमंचीय प्रबन्धन

विद्यार्थियों को विद्यालय में पोस्टर, टिकट विवरणिका, करपत्रों इत्यादि के डिजाइन बनाना सीखने के लिए प्रोत्साहित करना चाहिए। उच्च माध्यमिक स्तर के विद्यार्थियों को स्थानीय रंगमंच, सांस्कृतिक उत्सव, लोक उत्सव, इत्यादि को देखने का बढ़ावा देना चाहिए जिससे वे रंगमंच का मूल्यांकन एवं स्वयं का मूल्यांकन करने की क्षमता का विकास कर सकें। अपने दैनिक अनुभवों एवं विकास आदि को भी पुस्तिका में लिख सकते हैं जो उनके स्वयं के मूल्यांकन के लिए मददगार साबित होगा। इस स्तर के विद्यार्थियों को सामाजिक मुद्दों, मानव प्रकृति एवं संबंधों पर व्यक्त प्रतिक्रिया का भी रिकार्ड रखना चाहिए।

विधि

1. शिक्षक द्वारा चर्चा, आदान-प्रदान, परियोजना कार्य एवं गृह कार्य के माध्यम से सैद्धांतिक पुट प्रदान करना चाहिए।
2. सभी प्रायोगिक कार्य, कार्यशाला के माध्यम से किए जाएँ जो सहभागी प्रकृति की हो।

   विशेष आवश्यकताओं वाले बच्चों के लिए पाठ्यचर्या को सीखने का उद्देश्य ऐसा होना चाहिए जिसे वे आसानी से प्राप्त कर सकें। विभिन्न नाटकों के

मॉडल और गतिविधियाँ प्रत्येक बच्चे को उसकी आवश्यकताओं को ध्यान में रख कर कराई जानी चाहिए। जैसे :

विशेष शारीरिक आवश्यकताओं वाले बच्चों के लिए

- वर्णन, कहानी कहना और वाणी संबंधी गतिविधि
- ध्वनि एवं संगीत पर आधारित
- कठपुतली संबंधी
- औपचारिक नाटक जिसकी योजना और निर्देश स्पष्ट हों।

जो बच्चे देख न सकते हों उनके लिए

- वर्णन, कहानी कहना और वाणी संबंधी गतिविधि
- ध्वनि एवं संगीत पर आधारित
- संगीत, वाद्ययंत्र को बजाना

भावनात्मक अथवा मानसिक रूप से पीड़ित बच्चों के लिए

- भूमिका निर्वाह
- इम्प्रोवाइजेशन
- संगीत एवं गति पर आधारित
- मुखौटे एवं कठपुतली बनाना

7.2 संगीत

7.2.1 उच्च प्राथमिक स्तर

उद्देश्य

- भिन्न स्वरों एवं लय (ताल) के ज्ञान के आधार पर संगीत के प्रति संवेदनशील होना
- गायन तथा वाद्य संगीत की विभिन्न शैलियों को पहचानना

विषय वस्तु तथा विधियाँ

विषय वस्तु को उच्च प्राथमिक स्तर के बच्चों में संगीत के दोनों रूपों, गायन तथा वादन, के प्रति संवेदनशीलता को विकसित करने के योग्य होना चाहिए। शुद्ध एवं विकृत स्वरों की गहरी समझ एवं ज्ञान तथा कुछ अलंकारों को गाने की योग्यता सिखाई जानी चाहिए। राग आधारित संयोजना को बच्चों को सिखाना चाहिए, गायन में छोटा ख्याल (राग) तथा वाद्य संगीत में द्रुत गति इस स्तर पर लाए जा सकते हैं। कर्नाटक संगीत भी शिक्षक विद्यार्थियों की योग्यता एवं उपलब्ध साधन के अनुसार सिखा सकते हैं। सामुदायिक गायन, लोक गायन, देश भक्ति के गीत एवं भजन भी सिखाए जा सकते हैं। बच्चे अपने घर के सदस्यों से पारंपरिक गायन अथवा वादन सीख सकते हैं और उन्हें कक्षा या विद्यालय में किसी अवसर पर प्रस्तुत करने के लिए उत्साहित किया जाना चाहिए। प्रत्येक विद्यार्थी को अपने प्रदर्शन में सुधार और विभिन्न गतिविधियों में भाग लेने के लिए अवसर दिया जाना चाहिए, जैसे सामूहिक गायन, वादन (ऑरकेस्ट्रा), युगल गीत, तीन लोगों के साथ के भी गीत इत्यादि। इसे इस स्तर पर विद्यार्थियों द्वारा विकसित किया जाना चाहिए।

संगीत शिक्षा को अधिक रूढ़िवादी ढंग से न देते हुए नए मौलिक तरीकों के लिए भी गुंजाइश रखनी चाहिए। विद्यार्थियों को विभिन्न समकालीन संगीतकारों - गायकों एवं वादकों-के बारे में बताना चाहिए। विभिन्न प्रकार की गतिविधियों एवं परियोजना कार्यों के माध्यम से उन्हें संगीतकारों के चित्र, उनकी जीविका, गायन अथवा वादन शैली इत्यादि के बारे में सूचना एकत्रित करने के लिए कहना चाहिए और उन्हें कक्षा में प्रदर्शित किया जाना चाहिए। स्थानीय समुदाय/क्षेत्र के संगीतकारों को इस स्तर पर विद्यार्थियों को सिखाने की संभावना की खोज करनी चाहिए। श्रव्य-दृश्य साधनों के माध्यम से शिक्षक उन्हें यथासम्भव शास्त्रीय गायन एवं वाद्य संगीत को सुनाने अथवा दिखाने का प्रबन्ध कर सकते हैं।

7.2.2 माध्यमिक स्तर

संगीत से विद्यार्थियों पर न केवल पाठ्यचर्या का बोझ कम होगा बल्कि उनके मन में चल रहे द्वंद्वों को भी कम करने में सहायता मिलेगी साथ ही उनके भीतर की भावनाओं को भी बाहर निकलने का मौका

मिलेगा। संगीत की सहायता से सृजनात्मक अभिव्यक्ति द्वारा उनमें उन्नत सौंदर्यबोध विकसित होने के कारण विद्यार्थी को भावनात्मक संतुलन एवं सामंजस्य स्थापित करने में सहायता मिलती है। इस स्तर पर विषय एक विधा का स्वरूप ले लेता है जिसे उच्च शिक्षा के स्तर पर भी जारी रखा जा सकता है। यह एक निर्णायक घड़ी है जहाँ स्कूली शिक्षा को उच्च शिक्षा से जोड़ा जाता है। इस स्तर पर संगीत की शिक्षा को महाविद्यालय की शिक्षा के साथ भी जोड़ा जाना चाहिए।

इस स्तर पर विद्यार्थियों के लिए विषय के सैद्धांतिक एवं प्रायोगिक दोनों ही भाग समान रूप से महत्वपूर्ण हैं। उनमें शास्त्रीय संगीत के ऐतिहासिक पहलू को भी विकसित करने की जरूरत है। विषय के सैद्धांतिक भाग में विद्यार्थियों को इस योग्य होना चाहिए कि वे विभिन्न रागों और स्वरों को स्पष्ट समझ से परिभाषित कर सकें।

विषय वस्तु एवं विधियाँ

इस स्तर पर ताल, स्वर, आदि के माध्यम से विद्यार्थियों में शास्त्रीय संगीत के विभिन्न पहलुओं के प्रति मूल भाव जागृत करना चाहिए। इस स्तर पर रागों एवं उसके स्वरों की विशेषताओं के आधार पर विद्यार्थियों में विभिन्न रागों एवं स्वरों को पहचानने की क्षमता का विकास होना चाहिए।

7.2.3 उच्चतर माध्यमिक स्तर

विषय एवं प्रणाली

गायन : संगीत के वाद्य (सितार, सरोद, गिटार, वायलिन, बाँसुरी इत्यादि)

सिद्धांत : श्रुति, स्वर

- स्वरलिपि की काम करने लायक जानकारी
- सांगीतिक वाद्यों का वर्गीकरण
- संगीतकारों का योगदान और उनकी आत्मकथाएँ
- परियोजना कार्य

7.3 नृत्य

नृत्य शिक्षण को औपचारिक पाठ्यचर्या में सम्मिलित करने के विशेष लाभ हैं जो संभवत: केवल भारतीय नृत्य अभ्यास पद्धति के अभ्यास में ही मिलते हैं।

चूँकि शास्त्रीय नृत्य गति, संगीत, अभिव्यक्ति, साहित्य, दर्शन, पौराणिक कथाओं, लय, छंद, योग एवं साधना जैसे सौंदर्य के अनुभवों की परिणति का माध्यम है, यदि इसे अच्छी तरह से शिक्षा में शामिल किया जाए तो औपचारिक शिक्षा पद्धति की अनेक समस्याओं का स्वयं ही निदान हो जाएगा इसके कुछ लाभ निम्न हैं:

- नृत्य के माध्यम से शिक्षार्थी अपने शरीर का ज्ञान प्राप्त करते हैं – किस प्रकार उन्हें खड़ा होना चाहिए, श्वास लेना चाहिए, अपनी रीढ़ की हड्डी को किस प्रकार रखना चाहिए और किस प्रकार चलना चाहिए इत्यादि।
- नृत्य से व्यक्ति में संवेदना का विकास होता है। ऐसे सामाज में जहाँ भावनाओं को दबा कर रखना पड़ता है तथा अभिव्यक्ति के सीमित माध्यम हों वहाँ नृत्य के माध्यम से मानव संवेदना की अभिव्यक्ति होती है और अंदर और बाहर सामंजस्य की स्थापना होती है।
- नृत्य से एकाग्रता, मानसिक एवं शारीरिक चेतना, शीघ्रता से प्रतिक्रिया व्यक्त करने में सुधार और शारीरिक क्षमता का विकास होता है। नृत्य तनाव कम करने में भी सहायक सिद्ध होता है।
- नृत्य के प्रशिक्षण से स्मरणशक्ति तीव्र होती है। केवल नृत्य से ही इस बात का पता चलता है कि शरीर की अपनी स्मरणशक्ति है।
- अन्य कलारूपों के साथ इसका संबंध होने से मस्तिष्क में सोचों का विस्तार होता है। किसी भी कला का विकास एकांत में नहीं होता। प्रत्येक कला में अन्य कलाओं की झलक होती है। संगीत, नृत्य का एक अभिन्न अंग है और कविता,

चित्रकला एवं मूर्तिकला भी नृत्य से भलीभाँति जुड़े हुए हैं। अत: नृत्य केवल एक शारीरिक गतिविधि न होकर सांस्कृतिक विरासत को जानने का संपूर्ण अनुभव है।

7.3.1 उच्च प्राथमिक स्तर

अधिगम के उद्देश्य

- विभिन्न शास्त्रीय नृत्य परंपराओं और उसकी गतियों के माध्यम से प्रायोगिक ज्ञान एवं मूल समझ से परिचित होना।
- सौंदर्यात्मक दृष्टि का विकास।
- शरीर और मस्तिष्क के सामंजस्य से सम्पूर्ण व्यक्तित्व का विकास।
- साहित्यिक और सांस्कृतिक विरासत की समझ।

विषय वस्तु एवं विधियाँ

विद्यार्थियों में शास्त्रीय संगीत की परिभाषा और उनमें शास्त्रीय एवं क्षेत्रीय नृत्य शैलियों में अंतर की समझ होना आवश्यक है। उन्हे देश की शास्त्रीय नृत्य परंपराओं का ज्ञान, उनका भौगोलिक विस्तार, हर एक का वर्णन वेशभूषा एवं इतिहास से भी परिचित होना चाहिए। विद्यार्थियों को इस स्तर पर नृत्य के सरल पारिभाषिक शब्दों से भी परिचित होना चाहिए जैसे रस, हस्त, अभिनय आदि। उनके सौंदर्यबोध के विकास हेतु उन्हें नृत्य के प्रदर्शन, अपने क्षेत्र के नृत्य संस्थानों में जाकर सीखने की प्रक्रिया समझनी चाहिए। विद्यार्थियों को समीप के स्मारकों, संग्रहालयों तथा मंदिरों आदि में जाना चाहिए और वहाँ प्रदर्शित नृत्य रूपों के बारे में लिखना चाहिए।

उच्च प्राथमिक स्तर के दौरान, नृत्य के माध्यम से उन्हें पौराणिक कथाओं से परिचित कराया जाना चाहिए जो विशेषकर महाभारत, रामायण तथा पंचतंत्र पर आधारित हों। सामान्य नृत्य गतिविधि और संगीत के माध्यम से काल्पनिक विषयों को लिया जा सकता है।

7.3.2 माध्यमिक स्तर

माध्यमिक कला शिक्षा की पाठ्यचर्या में कला शिक्षा की एक विधा प्रत्येक विद्यार्थी को दो वर्षों तक सीखनी अनिवार्य होनी चाहिए। पाठ्यचर्या में नृत्य के दोनों सैद्धांतिक और अभ्यास पक्षों को 30:70 के अनुपात में शामिल करना चाहिए।

अधिगम के उद्देश्य

- मूल नृत्य रूपों के ज्ञान को बढ़ाना जिससे पहले ही परिचित कराया गया है।
- नृत्य रूपों के सांगीतिक घटकों के साथ परिचय बढ़ाना।
- नृत्य रूपों से संबद्ध क्षेत्रों के अन्य पहलुओं जैसे कि वाद्यों, तकनीक, वेशभूषा, मंच सज्जा, प्रदर्शन, संगीत सभा और दर्शक सुलभे आचरण, सौन्दर्य बोध इत्यादि का एक दृष्टिकोण विकसित करना।

प्रायोगिक

- चुने हुए शास्त्रीय नृत्य के रूपों और उनके प्रयोगों के मूल पदचाप, स्थितियों, हस्तगतियों और मुद्राओं का प्रयोग करना।
- लयात्मक समय चक्र को समझना।
- नृत्य के सरल संयोजनों का अभ्यास करना।

सैद्धांतिक

- भारत और क्षेत्रीय भागों में शास्त्रीय नृत्य का संक्षिप्त इतिहास और जहाँ से वह मूल रूप से संबद्ध है:
- भारत के नाट्यशास्त्र से परिचित कराना।
- सुप्रसिद्ध नर्तकों एवं संगीतकारों का जीवन परिचय।

परियोजनाएँ

इन परियोजनाओं में शामिल किया जा सकता है जीवन्त शास्त्रीय नृत्य प्रदर्शनों को देखना और बाद में सुचारू रूप से समूह में चर्चा करना।

7.3.3 उच्चतर माध्यमिक स्तर

उद्देश्य

- चयनित नृत्य शैली का गहन अध्ययन।
- विद्यार्थी नृत्य की शब्दावली का प्रयोग करते हुए पूरी तरह से दूसरों को इसका संप्रेषण करने और समझाने में सक्षम हो।

विषय वस्तु

इस स्तर पर विद्यार्थियों का ध्यान चुनी गई नृत्य शैली (नृत्त, नृत्य, अभिनय) की विस्तृत जानकारी पर होना चाहिए तथा इससे संबंधित साहित्यिक पाठों पर भी। मंचीय कला की सामग्री जैसे ध्वनि, प्रकाश, मंच और वेशभूषा एवं सज्जा आदि से परिचित कराया जाना चाहिए। नृत्य रूपों से संबद्ध संगीत यंत्रों की जानकारी भी आवश्यकतानुसार होनी चाहिए ।

प्रायोगिक

- पारंपरिक नृत्य शैली के आधारभूत तत्वों की जानकारी हासिल करना।
- नृत्य की शैली के संगत वाद्य एवं संगीत के प्रकारों की समझ होना।

सैद्धांतिक

- नाट्यशास्त्र का विस्तृत अध्ययन एवं अभिनय दर्पण का परिचय।
- संबंधित नृत्यशैली से जुड़े कवि और उनके कार्यों के विषय की जानकारी।

परियोजना

- प्रत्येक विद्यार्थी द्वारा व्याख्यान प्रदर्शन से प्रस्तुतीकरण।
- नृत्य के उदाहरण सहित अनुभव/साक्षात्कार पर आधारित शोधपत्र/प्रलेखन।
- नृत्य की अन्य शैली जैसे आधुनिक नृत्य, प्रयोगात्मक नृत्य आदि का अध्ययन।
- नृत्य शिक्षण को शामिल करना।
- विभिन्न नृत्य रूपों के प्रस्तुतीकरण में भाग लेना।

7.4 समय का निर्धारण

7.4.1 पूर्व प्राथमिक स्तर

पूर्व प्राथमिक कक्षाओं में, सामान्यत: सप्ताह में पाँच दिन, चार घंटे की कार्यावधि होती है। यद्यपि पूरी पाठ्यचर्या का आदान-प्रदान कथा रूपों के माध्यम से हो सकता है, तथापि कम-से-कम एक घंटा प्रत्येक दिन कलात्मक अनुभवों के लिए स्वीकृत होना चाहिए।

7.4.2 प्राथमिक एवं उच्च प्राथमिक स्तर

कक्षा I से V तक :

- प्रति सप्ताह दो घंटे (पीरियड) रेखांकन, चित्रकला एवं मूर्तिकला के लिए
- प्रति सप्ताह दो घंटे दस्तकारी के लिए
- प्रति सप्ताह दो घंटे संगीत के लिए
- प्रति सप्ताह दो घंटे नृत्य के लिए
- प्रति सप्ताह दो घंटे नाटक के लिए

गतिविधियों पर आधारित कला एवं शिल्प जैसे विषयों के लिए विद्यालयों को ब्लॉक पीरियड जो 40-45 मिनट के हों कम से कम दो पीरियड, निर्धारित करने चाहिए। औसतन प्रत्येक विद्यालय में सप्ताह में 40 घंटे (प्राथमिक कक्षा के लिए) और 48 घंटे (उच्च प्राथमिक कक्षाओं) के लिए होते हैं जिसमें एक-चौथाई समय कला शिक्षा के लिए स्वीकृत होना चाहिए।

7.4.3 माध्यमिक स्तर

माध्यमिक स्तर पर कला शिक्षा के लिए एक अनिवार्य विषय के रूप में समय का विभाजन अन्य विषयों के

समान होना चाहिए। कम-से-कम 6 घंटे (तीन ब्लॉक पीरियड) प्रायोगिक गतिविधि के लिए और एक घंटा सैद्धांतिक कार्य के लिए स्वीकृत होना चाहिए।

7.4.4 उच्चतर माध्यमिक स्तर

उच्चतर माध्यमिक स्तर के क्रम में कला शिक्षा को एक अनिवार्य विषय के रूप में कम-से-कम 8 पीरियड (चार मिश्रित पीरियड) प्रायोगिक गतिविधि के लिए और 2 पीरियड ब्लाक सैद्धांतिक कार्य के लिए स्वीकृत होने चाहिए। प्रत्येक दिन कला और शिल्प के लिए आधे दिन का समय स्वीकृत किया जा सकता है। यह कार्यशाला, मेला, सामुदायिक परियोजना आदि के लिए उपयोग में लाया जा सकता है।

8. कला शिक्षा में मूल्यांकन

यह सुझाव दिया जाता है कि कला शिक्षा में गैर-प्रतियोगी और गैर-तुलनात्मक आधार पर समय-समय पर मूल्यांकन किया जाना चाहिए जिससे बच्चों के प्रदर्शन में सुधार का आकलन किया जा सके। बच्चों के प्रर्दशन में ऊर्ध्व वृद्धि (Vertical Growth) की समीक्षा आवश्यक है। मूल्यांकन के मानकों का अलग-अलग स्तर के लिए विस्तार से मार्गदर्शन यहाँ दिया गया है।

8.1 पूर्व प्राथमिक स्तर

(*लेखन मंडल द्वारा लिखे पेपर के आधार पर मूल्यांकन के संदर्भ में)

इस स्तर पर मूल्यांकन विवरणात्मक होना चाहिए जिसमें बच्चों के विकास और व्यवहार का वर्णन हो। शिक्षा के इस स्तर पर भाषा, संख्या और जीवन के संदर्भ में साधारण विचारों इत्यादि को कला के माध्यम से पढ़ाया जा सकता है। अतः विद्यालय में बिताए चार घंटों में बच्चों की सभी गतिविधियों का आकलन किया जाना चाहिए। यह अच्छा रहेगा यदि शिक्षक मुक्त अभिव्यक्ति और सृजनात्मकता पर पूरे सत्र में निरंतर बल दे और बच्चों का आकलन उसके स्वयं के विकास से करे न कि

मूल्यांकन

- कोई परीक्षा नहीं
- प्रक्रिया आधारित
- मानदण्ड आधारित
- गैर प्रतियोगी
- निरंतर और व्यापक

कक्षा के अन्य बच्चों के तुलनात्मक संदर्भ में क्योंकि इससे बच्चों के अंदर की रचनात्मकता समाप्त होती है। आत्म-विकास के लिए प्रतियोगिता से ज्यादा बच्चों को अधिक उत्साहित किए जाने की आवश्यकता है।

8.2 प्राथमिक स्तर

प्राथमिक स्तर से उच्च माध्यमिक स्तर तक मूल्यांकन की प्रक्रिया महत्वपूर्ण है जिसे वर्ष भर में किया जाना चाहिए। हर सत्र में निम्न बिंदुओं के मापन-स्तर पर विद्यार्थियों के कार्य का आकलन किया जा सकता है (प्रत्येक सत्र में):

- ध्यान से देखते हुए सीखना (अवलोकन)।
- सहजता और मुक्त अभिव्यक्ति।
- अलग-अलग गतिविधियों में भाग लेने की रुचि।
- प्रत्येक बच्चे का समूह कार्य में भाग लेना।

8.3 उच्च प्राथमिक स्तर

बच्चों द्वारा किए गए कार्य का समय-समय पर आकलन किया जाना चाहिए जो उनके प्रगति-पत्र में निम्नलिखित चार या पाँच बिंदुओं वाले मापक पर दिखाया जाना चाहिए :

- विद्यार्थियों की भागीदारी।
- सामाजिक मेल-जोल।
- कला और अभिकल्पना के बुनियादी तत्वों/सिद्धांतों के प्रति विचार की संवेदनशीलता का विकास और समझ।
- प्रयुक्त माध्यमों को समझने में दक्षता।
- अलग-अलग माध्यमों को लेकर प्रयोग करना।

8.4 माध्यमिक स्तर

प्रत्येक टर्म (Term) में ग्रेड के साथ किया जाने वाला मूल्यांकन:

- दो वर्षों की समाप्ति पर छः पूर्ण कार्यों का आकलन किया जाना चाहिए।
- बोर्ड की परीक्षा से पहले 2 वर्ष के किए गए कक्षा IX और X के सारे कार्य का आंतरिक मूल्यांकन आवश्यक है (50 प्राप्तांक)
- बाहर के परीक्षक द्वारा (प्राप्तांक 50) पूर्ण कार्य की प्रदर्शनी को देखने के बाद और परीक्षा कार्य (छः घंटे का पेपर) आंतरिक परीक्षक की सलाह से लिया जाएगा।

8.5 उच्चतर माध्यमिक स्तर

औपचारिक मूल्यांकन (पाँच-बिंदुओं वाले मापक पर) अन्य विषयों की तरह ही किए जाने चाहिए।

- पोर्टफोलियो की प्रस्तुति पर।
- प्रक्रियाओं पर आधारित।
- विभिन्न माध्यमों में कार्य करने की दक्षता।
- अवलोकन की शुद्धता।
- विद्यार्थियों की स्वयं की अभिव्यक्ति।
- समुचित अभिव्यक्ति।
- वस्तुओं के चित्रण रेखांकन में शुद्धता।

9. भारत में कला शिक्षा और शिक्षक-शिक्षा

शिक्षक बच्चों के प्रारंभिक जीवन में बहुत ही महत्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं। अभिभावकों के बाद शिक्षक ही वह वयस्क व्यक्ति होता है जिससे बच्चा अपने उम्र के प्रारंभिक वर्षों में मिलना-जुलना शुरू करता है (लगभग 3 वर्ष में और उसके पश्चात्) और इसी दौर में बच्चों के सीखने और उसके व्यवहार से वह आधार तैयार होता है जिससे वह अपने भविष्य की नींव रखता है। जब हम पाठ्यचर्या में बच्चे के व्यक्तित्व की चर्चा करते हैं तभी यह भी उतना ही महत्त्वपूर्ण है कि हम शिक्षक के व्यक्तित्व और शिक्षकों की क्षमता निर्माण पर नजर डालें।

शिक्षक-शिक्षा और देश के शिक्षकों की क्षमता विकास की प्रक्रिया को पूर्ण रूप से बदलने की आवश्यकता है क्योंकि शिक्षक ही वह मुख्य व्यक्ति होता है जो पाठ्यक्रम को कक्षा में बच्चों तक पहुँचाता है।

पूर्व-प्राथमिक और प्राथमिक स्तर पर कला शिक्षा की पाठ्यचर्या अन्य विषयों के अध्यापन से गहराई से जुड़ी होती है इसलिए कला शिक्षा को पूर्व-सेवा और अंत:सेवा के स्तर पर शिक्षक शिक्षा और प्रशिक्षण का एक अभिन्न अंग होना चाहिए। प्राथमिक स्तर पर अधिकतर विद्यालयों में एक ही शिक्षक पढ़ाता है इसलिए शिक्षक को शिक्षण-अधिगम में दृश्य और प्रदर्शन कलाओं की विभिन्न विधियों का प्रयोग करते हुए नवाचारी और सृजनात्मक होना चाहिए। कक्षा में शिक्षिका को स्वयं इतना सृजनशील होने की आवश्यकता है जिससे कि वह विद्यार्थियों को अधिक सृजनशील बनने की प्रेरणा दे सके। (शिक्षक-शिक्षा पर काम कर रहे राष्ट्रीय फोकस समूह से इस मसले पर सुझाव और परामर्श किया गया है।)

उच्च प्राथमिक स्तर से विशेषज्ञ और प्रशिक्षित शिक्षक की ज़रूरत होती है। भाषा, गणित, सामाजिक विज्ञान और विज्ञान जैसे दूसरे विषयों में पढ़ाने के लिए जिस तरह प्रशिक्षित स्नातकोत्तर (पी.जी.टी.) और प्रशिक्षित स्नातक शिक्षकों (टी. जी. टी.) को रखा जाता है, वैसे ही कला शिक्षा के लिए इस तरह के शिक्षकों को नहीं रखा जाता। कला शिक्षक एक प्रशिक्षित कलाकार भी हो सकता है लेकिन किसी भी महाविद्यालय या विश्वविद्यालय के पास संगीत, चित्रकला, नृत्य और नाटक में शिक्षकों को प्रशिक्षित करने के लिए चार साल का डिग्री पाठ्यक्रम नहीं है। कला के ऐसे विद्यार्थियों की ज़रूरत है जो शिक्षण को एक पेशे की तरह अपना लेने में रुचि रखते हों और उनके लिए कला शिक्षा में शिक्षक प्रशिक्षण की कम-से-कम एक साल की व्यवस्था हो, जहाँ वे विभिन्न शिक्षण-शास्त्रों, विधियों

और शिक्षण-अधिगम और मूल्यांकन की पद्धति सीख सकें।

1960 के दशक के परवर्ती वर्षों में भोपाल और अजमेर में स्थित क्षेत्रीय शिक्षा संस्थानों ने चित्रकला और औद्योगिक हस्तशिल्प के एक व दो साल के पाठ्यक्रम शुरू किए थे जिन्हें बाद में बंद कर दिया गया। आज के समय में दृश्य और प्रदर्शन कलाओं संबंधी पेशों का दायरा बढ़ रहा है अत: कला शिक्षा माध्यमिक और उच्च माध्यमिक स्तर पर अधिक-से-अधिक विद्यालयों में होनी चाहिए जहाँ ज्यादा कला शिक्षकों की ज़रूरत होगी। प्राय: यह देखा गया है कि विद्यालयों में जो कलाकार शिक्षक होते हैं वे विद्यार्थियों को सृजनात्मक और मौलिक बनाने के स्थान पर बहुधा अपनी शैली की नकल मात्र करवाते हैं। यहाँ पर समूह के तीन मुख्य सुझाव हैं:

- विभिन्न स्तरों पर शिक्षक-शिक्षा कार्यक्रमों में कला शिक्षा के विभिन्न घटकों को बढ़ाया जाए।
- कार्यरत शिक्षकों के लिए गहन शिक्षक-उन्मुखीकरण कार्यक्रम कराए जाएँ।
- शिक्षक बनने से पूर्व दृश्य या प्रदर्शनकारी कलाओं में व्यावसायिक डिग्री/डिप्लोमा प्राप्त करने के बाद कला शिक्षा के अध्यापकों के लिए एक साल के, पाठ्यक्रम का विकास किया जाए।

विभिन्न स्तरों पर शिक्षक-शिक्षा कार्यक्रम में कला शिक्षा को बढ़ाने के लिए समूह के निम्न सुझाव हैं:

- उच्च माध्यमिक स्तर के बाद दो साल का प्रशिक्षण कार्यक्रम विद्यार्थी को इस योग्य बनाता है कि वह प्राथमिक कक्षाओं में शिक्षण के योग्य हो सके लेकिन कला जैसे विषय के लिए यह समय अपर्याप्त है इसलिए सप्ताह में दो या तीन बार स्रोत-शिक्षक को प्राथमिक स्तर की कक्षाओं हेतु विद्यालय में बुलाया जाना चाहिए।
- प्राथमिक विद्यालय के शिक्षक के लिए यह महत्वपूर्ण है कि वह विषय की अवधारणाओं को पढ़ाने के लिए कला की विधाओं का प्रयोग करें। इसके लिए आवश्यक है कि शिक्षक-शिक्षा को उस तरह से रचा जाए कि शिक्षिका/शिक्षक स्वयं चित्रकारी, पेपर कटिंग, मुखौटा निर्माण, भूमिका प्रदर्शन, अभिनय, गायन, वादन, शरीर संचालन, चेहरे की भाव-भंगिमाएँ इत्यादि को सृजनात्मक और नवाचारी तरीके से प्रयोग में ला सकें। ये दृश्य और प्रदर्शन कलाओं के वे उपकरण हैं जिनका प्राथमिक शिक्षक को कक्षा में प्रयोग करना चाहिए।
- उच्च प्राथमिक और माध्यमिक स्तर के लिए शिक्षक-शिक्षा के पाठ्यक्रम में कला-प्रशंसा, फिल्म प्रशंसा और सौंदर्यबोध को शामिल किया जाना चाहिए। शिक्षक को इतना समर्थ होना चाहिए की वह कला की विभिन्न विधाओं का प्रयोग विभिन्न विषयों को पढ़ाते समय शिक्षण-उपकरण के रूप में कर सके।

दिल्ली विश्वविद्यालय के बी.एल. एड. (B.El.Ed) का पाठ्यक्रम

एक वर्ष (1998-99)

प्रायोगिक कोर्स

1.1 ललित कलाएँ/प्रदर्शन कलाएँ

1.2 हस्तशिल्प/सहभागी कार्य

1.1 प्रदर्शन कलाएँ

वैयक्तिक कार्य

- विवरण/भाषण
- स्वाँग और गतिविधि
- भूमिका का निर्वाह (रोल प्ले)
- इम्प्रोवाइजेशन (तात्कालिक भाषण)
- काव्य और संगीत

समूह कार्य

- ध्वनि और गतिविधि
- भूमिका निर्वाह
- तात्कालिक भाषण
- समूह गायन/कोरस

- समूह स्वाँग-बिना किसी कथ्य के या कथ्य के साथ
- कथा/नाट्य लेखन
- नाटक की तैयारी

पूर्व तैयारी (Warm up) : खेल तथा शारीरिक अभ्यास

- शरीर को खींचना और तानना
- साँस लेना
- छवि-प्रतिनिधि
- विश्वास–ढकेलना, उठाना, कूदना
- अंतराल (जगह और समय का)
- भाव
- संतुलन
- शारीरिक भंगिमाएँ
- मशीन

खेल

- आँखों का संपर्क
- फिश बॉल
- मूर्तिवत
- वर्णमाला बनाना
- शब्दों की कड़ी से कहानी की रचना करना
- वस्तुओं द्वारा कहानी की रचना करना
- स्टेशन बदलना
- अनदेखा घुमाव और उसके बाद कड़ियाँ बनाना
- शब्दों को फुसफुसाना (पास करना)
- आँखों को टिमटिमाना और उन्हें झपकाना
- ताली को पास करना
- अवलोकन
- शब्दों का खेल (यथाशीघ्र)

व्यक्तिगत कार्य–प्रत्येक गतिविधि के लिए 1-2 सत्र दें। समूह कार्य–1-2 सत्र, विद्यार्थियों द्वारा दर्शायी गई प्रगति के ऊपर निर्भर करेगा।

हिंदी, अंग्रेजी या सामाजिक विज्ञान के पाठों से नाटक तैयार करें।

शिक्षक-शिक्षा के लिए ड्रामा की विषयवस्तु : बी.एड.

क) भारतीय रंगमंच, विभिन्न लोक कलाओं, ग्रीक रंगमंच और संस्कृत नाटकों के सिद्धांतों के साथ परिचय। कुछ शास्त्रीय पुस्तकें जैसे ओडिपस रैक्स, मृच्छकटिकम, शाकुंतलम और महाभारत और रामायण कथाएँ पढ़ने के लिए विद्यार्थियों को प्रेरित करें और जाने माने मंचन समूहों और कंपनियों के प्रस्तुतीकरण को देखने का सुझाव दें।

ख) नाट्य कला की भंगिमाएँ एवं गतिविधियाँ: संकेत और कहानी कहना, एकाग्रता के लिए नाटक के खेल, अवलोकन तथा कल्पना और संतुलन के लिए अभ्यास, जगह का प्रयोग, भाषा और अभिव्यक्ति का संयोजन इत्यादि।

ग) बोलने से जुड़ी गतिविधियाँ: बातचीत, कथा एवं उपकथा के संकेत, किसी कल्पना विशेष अथवा वस्तु पर कथा बुनना, कहानी रंगमंच–दो या तीन भिन्न चरित्रों के साथ कहानी, कविता और गद्य के अंशों का पाठ।

घ) ध्वनि और संगीत: अपने शरीर का इस्तेमाल करके आवाज निकालना, कई ध्वनियों के संयोजन से लय में आर्केस्ट्रा बजाना–तालियों, हाथों, सीटी और डंडे आदि (स्थानीय संसाधन) के इस्तेमाल से।

ड.) मूक अभिनय और गति संचालन : रिकार्ड किए गए संगीत के साथ और खुद अपनी ध्वनि के साथ मूक अभिनय का परिचय देना।

च) भूमिका निर्वाह : मायावी विषय वस्तु, वास्तविक और काल्पनिक दुनिया से जुड़े छोटे और बड़े स्तर की भूमिकाओं का अभ्यास।

छ) तात्कालिक व्यवस्था (इम्प्रोवाइजेशन)

i) प्रतिदिन की स्थितियों, मानवीय संबंधों, प्रकृति और परिवेश पर आधारित तात्कालिक सामान्य व्यवस्था।

ii) वस्तुओं, वस्त्र-विन्यास और गुण-धर्म पर आधारित व्यवस्थाएँ।

iii) एक चरित्र या स्थिति विशेष के संदर्भ में जैसे–

- एक माँ का चरित्र जो कि किसी प्राकृतिक आपदा (भूकंप, सूनामी इत्यादि) या युद्ध में अपने बच्चे को खो चुकी है।
- एक सहमी हुई लड़की जिसे प्राथमिक वर्षों के बाद विद्यालय नहीं भेजा गया।
- भूतघर में बच्चों के समूह द्वारा खजाने की खोज।
- बाग में खेलते बच्चे।
- रेलवे प्लेटफार्म की जिंदगी।
- स्थानीय बाजार या मेले में एक शाम।
- विद्यालय/घर में एक मेहमान के आगमन की तैयारी।

iv) छोटी उम्र के बच्चों के लिए नाट्य रचना: नाटकीय संरचना और उसमें प्रयुक्त पारिभाषिक शब्द जैसे– प्लॉट, चरित्र, नाटक का पूर्व कथन, उपसंहार, द्वंद्व, संवाद, एकालाप, कलाएँ, नाटक का उत्कर्ष, दृश्य, दु:खद घटना, हास्य इत्यादि। सहयोगी ध्वनि और संगीत का प्रभाव, प्रकाश का प्रभाव और विशिष्ट प्रभाव इत्यादि से परिचय जिससे पूरे नाटक में माहौल और लय को बनाए रखा जा सके। पूर्णकालिक नाटकों के पाठन और किसी समूह या कंपनी के मंचन को दिखा कर उससे परिचय करवाना चाहिए।

v) लघु नाटक की रचना जो कम-से-कम दो कहानियों पर आधारित हो, जिसमें एक जन साहित्य से और दूसरा आधुनिक कहानियों से।

ज) मुखौटा और कठपुतलियाँ: कागज के सामान्य मुखौटे और कठपुतलियाँ–हथेली और हाथ की कठपुतलियाँ, अँगुलियों की कठपुतलियाँ, घर में बची हुई सामग्रियों से कठपुतलियाँ बनाना जैसे स्वेटर, मोजे, टी-शर्ट और फटा-पुराना कपड़ा आदि।

झ) साधारण मंच सज्जा : मंच पर दृश्य-विशेष के लिए रचना, वस्त्र-विन्यास, प्रकाश संरचना और विशेष प्रभाव।

नाटक शिक्षण की योजना : नाटक और रंगमंच एक प्रदर्शनकारी कला है, अत: मुख्य तौर पर नाट्य शिक्षण की प्रक्रिया एक सहभागी प्रयास है, विद्यार्थियों को अपने प्रश्न तैयार करने को उकसाती है, अपनी काल्पनिक दुनिया बनाने को प्रेरित करती है, अपनी रुचि के क्षेत्र को ढूँढ़ने का प्रयास करती है और शिक्षकों के निर्देशानुसार अपने को विकसित करने की कोशिश करती है। विद्यार्थियों को नाट्य संबंधी सभी गतिविधियों में भाग लेने की स्वतंत्रता होनी चाहिए जिससे वे अपने अंदर गंभीर नाटक के लिए ऐसी ऊर्जा का स्रोत ला सकें। स्व ज्ञान/प्रकृति और स्वयं की संवेदनशीलता की समझ पर नियमित अभ्यास के माध्यम से पाठ्यक्रम के प्रारम्भ में शिक्षक को सामूहिक संवेदनशीलता विकसित करने की आवश्यकता है।

यहाँ सीखने की प्रक्रिया कई तरह के नवाचारों की माँग करती है, अत: शिक्षक की कई तरह की भूमिकाएँ हो जाती हैं, जैसे मार्गदर्शक के रूप में, सुविधाएँ उपलब्ध कराने वाले के रूप में, रुझान पैदा करने वाले के रूप में। और साथ ही समूचे समूह के हिस्से के रूप में। नाटक के लिए कार्यशाला के माध्यम का प्रयोग होगा क्योंकि यह स्वयं सीखने के सिद्धांत पर आधारित है। सैद्धांतिक पक्ष की प्रकृति परस्पर बातचीत होगी जिसके आधार पर विद्यार्थियों को ऐसा मुक्त वातावरण दिया जाए कि वे उपलब्ध स्रोत पुस्तकों और शोध-पत्रिकाओं के माध्यम से अपने समझ के दायरे को विकसित कर सकें। विषय को थोपने और अनुशासनबद्ध करने की कोशिश न की जाए इसके बजाय विद्यार्थियों को पूरी स्वतंत्रता दी जानी चाहिए कि स्व-नियंत्रण और स्व-अवलोकन से उनकी छुपी हुई क्षमता बाहर आ सके। विद्यार्थियों को इसके लिए प्रोत्साहित किया जाना चाहिए कि वे अपने अनुभव और भावों को स्व-अवलोकन पत्रिका

(Self-reflective Journal) में लिख सकें जिससे वे अपने अन्दर होने वाले विकास का दैनिक/साप्ताहिक आधार पर आकलन कर सकें।

10. कार्यान्वयन के तरीके

विद्यालयी शिक्षा की मुख्य पाठ्यचर्या में कला शिक्षा को लाना, विभिन्न हित-समूहों द्वारा उसे अपनाना और विद्यालयों में इसको प्रभावकारी ढंग से पहुँचाने की विभिन्न अवस्थाओं की पुनर्समीक्षा ज़रूरी है। प्रत्येक स्तर के लिए पाठ्यचर्या और विस्तृत पाठ्यक्रम, शिक्षण-अधिगम की सामग्री, मूल्यांकन के मानदंड, सेवापूर्व और सेवारत शिक्षक को व्यापक प्रशिक्षण और विद्यालयों को सुविधाओं और संसाधनों को विकसित करने के मार्ग-दर्शन उपलब्ध कराने की अत्यंत आवश्यकता है। विभिन्न हित-समूहों जैसे राज्यों के निदेशालय, परीक्षा बोर्ड, शिक्षा विभाग, विद्यालय प्रबंधन, प्रधानाचार्यों, शिक्षकों और अभिभावकों को कला शिक्षा के प्रति संवेदनशील बनाने की आवश्यकता है। विषय के प्रति संवेदनशीलता शिक्षा की गुणवत्ता बढ़ाने में सहायक सिद्ध होगी।

एन.सी.ई.आर.टी. द्वारा विकसित की गई पाठ्यचर्या की रूपरेखा विभिन्न राज्यों को, विद्यालयी शिक्षा के विभिन्न स्तरों पर सीखने-सिखाने के उदेश्यों और विषय सामग्री और प्रदर्शनकारी कला तथा दृश्यात्मक तरीके से सिखाने की प्रक्रिया पर एक व्यापक मार्गदर्शन उपलब्ध करा सकती है। पाठ्यक्रम ऐसा होना चाहिए कि जिसे सफलतापूर्वक कक्षा में प्रयोग किया जा सके और इसका कार्यान्वयन प्रभावकारी ढंग से हो। इसके लिए राज्यों, परीक्षा बोर्डों, शिक्षा विभागों, निदेशालयों, विद्यालय प्रबंधन, विद्यालय प्रधानाचार्य, शिक्षकों और अभिभावकों इत्यादि के लिए भिन्न स्तरों पर तरह-तरह की रणनीतियाँ अपनाए जाने की आवश्यकता है ।

सुविधाएँ और संसाधन

सभी विद्यालयों में कला शिक्षा के लिए आधारभूत सुविधाएँ होनी चाहिए जिसमें प्रशिक्षित शिक्षक, ऐसे संसाधन जो आवश्यक सामग्री उपलब्ध कराएँ, दृश्य और प्रदर्शन कला प्रस्तुत करने के लिए अलग स्थान इत्यादि उपलब्ध कराना शामिल हैं।

कक्षायी संगठन

आदर्श स्थितियों में विद्यालयों में दृश्य कला अथवा प्रदर्शनकारी कलाओं की गतिविधि के लिए विशेष रूप से निर्धारित स्थान उपलब्ध कराया जाना चाहिए। कला शिक्षा की गतिविधियों के लिए पर्याप्त जगह चाहिए, जहाँ विद्यार्थी अपने काम को फैला सकें, आराम से बैठ सकें और अपने शिक्षकों से आसानी से बात कर सकें। सावधानीपूर्वक योजनागत तरीके से परिपूर्ण और उपयुक्त सामग्रियों वाला कला-कक्ष कला शिक्षा के लिए ज़्यादा प्रभावकारी होता है। कुछ विद्यालयों में अलग कला विभाग भी हैं। कुछ विद्यालयों में अलग से हॉल, प्रदर्शन की जगहें या कक्ष भी हैं। जबकि दूसरी ओर कुछ ऐसे भी विद्यालय हैं जहाँ कला के घंटे के लिए कक्षाओं को ही कला कक्ष की तरह इस्तेमाल किया जाता है। विद्यार्थियों को इस बात के लिए प्रोत्साहित किया जाना चाहिए कि वे कक्षा में उपलब्ध सामग्री का प्रयोग करें, सजाएँ और कक्ष के देखभाल की ज़िम्मेदारी लें। विद्यालय में एक कला कक्ष, संगीत कक्ष या थियेटर निश्चित रूप से होना चाहिए जहाँ चित्र, बुलेटिन बोर्ड, संग्रह करने की जगह, प्रदर्शन की जगह, काम करने की जगह, स्लाइड दिखाने की सुविधा और कंप्यूटर इत्यादि होना चाहिए।

कक्षा में विद्यार्थियों की संख्या सीमित और प्रबन्धनीय होनी चाहिए। उससे शिक्षकों को प्रत्येक विद्यार्थी पर व्यक्तिगत तौर से ध्यान देने का मौका मिलेगा। अगर कक्षा बड़ी हो तो उसे कई समूहों में बाँट लिया जाना चाहिए। इससे शिक्षक समूहवार पर्यवेक्षण कर सकेंगे। किसी भी विषय विशेष में की जाने वाली गतिविधियों के अनुरूप ही कक्षा की व्यवस्था की जानी चाहिए।

गीत और नृत्य कक्ष की व्यवस्था भी इसी के अनुसार की जानी चाहिए। एक आदर्श स्थिति में विद्यालयों में संगीत के लिए एक अलग कक्ष होना चाहिए जिसमें

कि विभिन्न प्रकार के वाद्य जैसे तबला, सितार, तानपुरा इत्यादि हों जो इस प्रकार रखे जाएँ कि बच्चों की पहुँच वहाँ तक हो। इस कक्ष का प्रयोग नाट्य-अभ्यास के साथ-साथ नृत्य के लिए भी हो सकता है। चूंकि गायन की प्रक्रिया में आवाज की तीव्रता बढ़ जाती है विशेषकर समूहगान के समय या वाद्य बजाते समय। यह विद्यालय के किसी एक कोने पर स्थित हो। बैठने की व्यवस्था जमीन पर होनी चाहिए जिससे सभी विद्यार्थी बैठ सकें। चाहे यह कमरा हॉल दृश्य या प्रदर्शन कलाओं के लिए उपयोग में लाया जाता हो, वहाँ एक ऐसा कोना होना चाहिए जिसमें कला संबंधी पुस्तकें, कलाकारों की जीवनी पर पुस्तकें, चित्र आदि हों जिसे बच्चे स्वेच्छा से देख-पढ़ सकें।

कक्षा और कक्षा के बाहर अभ्यास

कक्षा में और कक्षा के बाहर अभ्यास करने के लिए स्कूल और शिक्षकों को कुछ सुझाव दिए जा रहे हैं। शिक्षकों के लिए जहाँ तक संभव हो समूह कार्य करवाना चाहिए। इससे बच्चों में उनके संसाधनों को साझा करने तथा सहयोग का भाव विकसित होगा। पूर्व प्राथमिक स्तर से लेकर माध्यमिक स्तर तक के विद्यार्थियों के पास इसका अवसर होना चाहिए कि वे अपनी कक्षा को साफ रखें उसमें चार्ट, पोस्टर, चित्र इत्यादि लगाएँ जिसमें एक नियमित अंतराल के बाद बदलाव भी होना चाहिए। विद्यार्थियों के काम की प्रदर्शनी से उनको अधिक काम करने की प्रेरणा मिलेगी। शिक्षकों (कक्षा विशेष के शिक्षक, कला शिक्षक, और विषयों के शिक्षक सहित) को सभी विद्यार्थियों को अवसर देना चाहिए कि वे अपने काम का प्रदर्शन कर सकें।

स्थानीय संसाधनों का उपयोग

देश की सामाजिक-आर्थिक तथा सांस्कृतिक विविधता को देखते हुए यह अनिवार्य सा हो जाता है कि विद्यालय, अभिभावक तथा शिक्षक विद्यालयी शिक्षा की विकासात्मक अवस्थाओं में स्थानीय क्षेत्रीय कला और कारीगरी की परंपरा का उपयोग करने के योग्य बनें। जैसा कि पहले भी कहा गया है कि हमें अपनी सांस्कृतिक विविधता को संरक्षित रखने तथा स्थानीय एवं क्षेत्रीय परंपराओं को किसी एक समरूप संस्कृति में शामिल होने से बचाने की ज़रूरत है। अतः बच्चों को अपने आस-पास की अद्वितीयता तथा विविधता के प्रति सचेत करने की आवश्यकता है। सभी विद्यालयों को चाहिए कि वे बच्चों को विद्यालय की चारदीवारी के बाहर समुदाय के साथ काम करने के अनुभव उपलब्ध करवाएँ। भारत में लगभग सभी शहरों, नगरों तथा गाँवों के पास स्थानीय कलाओं तथा शिल्प की परंपराएँ, पुराने स्मारक आदि हैं जिनके आस-पास बच्चे अपने इतिहास की रचना कर सकते हैं। कलाकारों, शिल्पकारों तथा प्रदर्शनकर्ताओं को आमंत्रित किया जा सकता है या उन्हें अंशकालीन आधार पर रोजगार उपलब्ध करवाया जा सकता है ताकि वे अपनी कला विधाओं के बारे में विद्यार्थियों को सिखा सकें। शिक्षक लगातार ऐसी सामग्री, पोस्टर, किताबों, चार्ट, दृश्य-श्रव्य सामग्री आदि की खोज में रहें तथा एक छोटा पुस्तकालय या संग्रहालय बनाएँ जिनका विद्यार्थी स्वयं उपयोग तथा देखरेख कर सकें। विद्यार्थियों की मदद से शिक्षक प्रदर्शन हेतु सामग्री का निर्माण कर सकते हैं।

कार्यशालाओं का आयोजन

विद्यालय साप्ताहिक या पाक्षिक कार्यशालाओं का आयोजन लगातार कर सकते हैं जहाँ विद्यार्थियों के साथ बातचीत करने के लिए स्थानीय कलाकारों को आमंत्रित किया जा सकता है। जहाँ उन्हें कला और शिल्प के विभिन्न रूपों को सिखा सकते हैं। विद्यार्थियों को आनुभविक तौर पर सिखाने के लिए रंगमंच, संगीत/गायन, वाद्य यंत्र बनाने, मिट्टी की वस्तुओं को बनाने का काम, चमड़े का काम, लोक नृत्य, एनिमेशन तथा अन्य कलाओं के लिए कार्यशालाओं का आयोजन किया जा सकता है। इन कार्यशालाओं में पड़ोसी विद्यालयों के विद्यार्थी तथा शिक्षकों को बुलाया जा सकता है। कार्यशाला, कलाकार के कार्य

करने के स्थान पर भी आयोजित की जा सकती है। धरोहरों के संरक्षण तथा राष्ट्रीय प्रतीकों के अध्ययन के लिए भी कार्यशालाएँ आयोजित की जा सकती हैं।

कक्षा में परस्पर बातचीत

शिक्षक के लिए यह ज़रूरी है कि वह विद्यार्थियों से लगातार मिले और उनसे उनकी रुचियों के बारे में बातचीत करे कि वे कक्षा में क्या करना चाहते हैं बजाय इसके कि हमेशा वह आदेशात्मक स्वर में बात करे। बच्चे स्वयं को महत्वपूर्ण तब समझते हैं जब वे अपने अनुभव या कार्य के बारे में कक्षा के अन्य विद्यार्थियों को बताते हैं। यह ज्ञान के आदान-प्रदान का एक और आयाम है। शिक्षक को भी अपने सीखने के अनुभवों पर बच्चों से बातचीत करनी चाहिए और विभिन्न गतिविधियों में भाग लेना चाहिए। शिक्षकों को अपनी कक्षा के अनुभवों को विद्यालय के दूसरे शिक्षकों और दूसरे विद्यालय के शिक्षकों से भी बाँटना चाहिए। विभिन्न विद्यालयों के कला शिक्षकों का एक संगठन होना चाहिए जहाँ वे शिक्षण-अधिगम और मूल्यांकन के अच्छे प्रचलनों का आदान-प्रदान कर सकें।

11. कला शिक्षा के शिक्षकों एवं विद्यालय के लिए संसाधन सामग्री

विद्यालयों को एक छोटे पुस्तकालय का प्रबंध करना चाहिए, जिसमें संदर्भ सामग्री और विभिन्न सरकारी और गैर-सरकारी संगठनों की छपी हुई सामग्री और कला के विभिन्न रूपों पर दृश्य-श्रव्य मीडिया सामग्री का संग्रह हो। इसमें शिक्षकों के लिए निर्देशिका, दृश्य एवं श्रव्य माध्यमों के कैसेट, सीडी-रोम, फिल्म इत्यादि को संसाधनों की उपलब्धता के अनुसार रखा जा सकता है। विद्यालय को एक छोटा संसाधन केंद्र भी बनाया जा सकता है जो समुदाय के लोगों के लिए भी उपलब्ध हो। विद्यार्थियों द्वारा जमा की गई सामग्री को एक संग्रहालय में रखा जा सकता है। इन संसाधन केंद्रों, पुस्तकालयों या संग्रहालयों तक सारे विद्यार्थियों की पहुँच होनी चाहिए। यहाँ हम अलग-अलग संस्थाओं द्वारा विकसित की गई कुछ सामग्रियों के बारे में जानकारी दे रहे हैं।

राष्ट्रीय शैक्षिक अनुसंधान और प्रशिक्षण परिषद्

- कक्षा VI के लिए कला शिक्षा पर शिक्षक संदर्शिका
- आओ मिल कर गाएँ, 1999
- संगीत का लहराता सागर, विष्णु दिगंबर पलुस्कर (हिंदी)
- हिंदुस्तानी शास्त्रीय संगीत के प्रमुख कंठ संगीतज्ञ (हिंदी)
- उत्तर भारतीय शास्त्रीय कंठ संगीत : एक अध्ययन
- राजा रवि वर्मा (हिंदी)
- एक लय एक ताल (हिंदी)
- कला शिक्षा की शिक्षक संदर्शिका (कक्षा V)
- फ़न विद आर्ट एंड क्राफ्ट्स
- रिसर्च स्टडीज एंड मोनोग्राफ्स-ऑर्केस्ट्रल हॉरमोनी

केंद्रीय शैक्षिक प्रौद्योगिक संस्थान

दृश्यात्मक और प्रदर्शनकारी कलाओं पर दृश्य-श्रव्य सामग्री

नेशनल बुक ट्रस्ट

- कॉन्टेंप्रेरी आर्ट इन इंडिया : ए पर्सपेक्टिव (प्राण नाथ मागो)
- इंडियन फ़ोक आर्ट्स एंड क्राफ्ट्स (जसलीन ध मीजा)
- इंडियन पेंटिंग (श्री शिवरामामूर्ति)
- टैंपल्स ऑफ़ नॉर्थ इंडिया (कृष्ण देव)
- टैंपल्स ऑफ़ साउथ इंडिया (के.आर. श्रीनिवासन)
- ट्राइबल लाइफ़ ऑफ़ इंडिया (एन.के. बोस)
- ऑल एबाउट फ़ोटोग्राफ़ी (अशोक दिलवाली)
- आर्ट : द बेसिस ऑफ़ एजुकेशन (देवी प्रसाद)
- शिक्षा का वाहन : कला (देवी प्रसाद)
- लो-कोस्ट/नो-कोस्ट टीचिंग एड्स (मेरी एन दासगुप्ता)
- रवीन्द्रनाथ टैगोर : फ़िलोसॉफ़ी ऑफ़ एजुकेशन एंड पेंटिंग (देवी प्रसाद)

- हिंदुस्तानी म्यूज़िक (अशोक रानाडे)
- म्यूज़िकल इंस्ट्रुमेंट्स (बी.सी. देव)
- परफॉर्मेंस ट्रेडिशन इन इंडिया (सुरेश अवस्थी)
- बंगाली थियेटर (किरनमोय राहा)
- क्रियेटिव ड्रामा एंड पपेट्री इन एजुकेशन (आर. कॉन्ट्रेक्टर)
- एंसीयेंट इंडियन कॉस्ट्यूम (रोशन अलकाज़ी)
- फ्लॉवरिंग ट्री (एम.एस. रंधावा)
- हिमालयन ट्रैवल्स (राम नाथ पसरीचा)
- हिंदुस्तानी संगीत (अशोक दा रानाडे)
- हिस्ट्री ऑफ़ गुजराती थियेटर (हसमुख बरडी)
- तानसेन : द मैजिकल म्यूज़िकल (अशोक डावर)

सांस्कृतिक स्रोत और प्रशिक्षण केन्द्र

दृश्य श्रव्य सामग्री

- ओडीसी नृत्य भाग 1 और 2
- रामायण : बालकांड
- भरतनाट्यम डांस भाग 1 और 2
- सरायकेल्ला छाऊ
- नटी नृत्य - हिमाचल प्रदेश
- पुरुलिया छाऊ
- मास्क डांसेज़ ऑफ़ वेस्ट बंगाल
- सिक्कम का लोक नृत्य
- जैसलमेर : द गोल्डन सिटी
- पोएट्री ऑन वाल्स : विष्णुपुर टेराकोट्टा टैंपल्स
- वीविंग टेल्स ऑफ़ क्लाथ :, बालुचूरी साड़ी
- आगरा फोर्ट (वर्ल्ड कल्चरल हेरिटेज साइट)
- आगरा घराना भाग 1 और 2
- कलिंग : लैंड ऑफ़ राइज़िंग सन
- रास मणिपुरी नृत्य
- खजुराहो (वर्ल्ड कल्चरल हेरिटेज साइट)
- चर्चेज़ एंड कांवेंट्स ऑफ़ गोवा (वर्ल्ड कल्चरल हेरिटेज साइट)
- महाबलीपुरम् (वर्ल्ड कल्चरल हेरिटेज साइट)

श्रव्य केसेट

- आज़ादी के गीत
- माई प्लेज टू फ्रीडम
- क्षेत्रीय गीत, भाग 1 और 2

रंगीन स्लाइड्स

- प्रदर्शनकारी कला के स्लाइड्स
- प्लास्टिक कला के स्लाइड्स

सांस्कृतिक संग्रह

- राष्ट्रीय प्रतीक
- राष्ट्रीय झंडा - तिरंगा
- राष्ट्रीय गान - जन-गण-मन
- राष्ट्रीय गीत - वंदेमातरम्
- राष्ट्रीय पशु - बाघ
- राष्ट्रीय पक्षी - मोर
- राष्ट्रीय फूल - कमल
- राष्ट्रीय कैलेंडर
- राष्ट्रीय इम्बलेम-अशोक चक्र
- फोट्र्स एंड पैलेसेस ऑफ मध्य प्रदेश
- फतेहपुर सीकरी 1 और 2
- टेक्सटाइल डिजाइन 1 और 2
- फोट्र्स, पैलेसेस एंड हवेली ऑफ़ राजस्थान
- पुरुलिया छाऊ
- पारंपरिक खिलौने
- वर्ल्ड कल्चरल हेरिटेज़ साइट्स-भारत 1, 2, 3 और 4
- आर्ट ऑफ़ पेपेट्री 1 और 2
- कुचीपुडी नृत्य
- भरतनाट्यम नृत्य
- मणिपुरी नृत्य
- कथकली नृत्य
- कथक नृत्य
- ओडिसी नृत्य
- एक्सप्रेशंस इन लाइंस

- म्यूजिकल इंस्ट्रुमेंट्स ऑफ़ इंडिया 1 और 2
- आर्किटेक्चर ऑफ़ दिल्ली
- कलचरल हिस्ट्री 1, 2 और 3
- फोट्र्स ऑफ़ महाराष्ट्र
- वर्ल्ड नेचुरल हेरिटेज साइट्स-भारत 1 और 2
- ट्रेडीशनल थियेटर फॉर्म्स ऑफ़ इंडिया 1 और 2
- रिपोर्ट्स और पुस्तकें
- कुंभ शहर प्रयाग
- तीर्थराज प्रयाग
- संस्कृति और विकास पर राष्ट्रीय सेमिनार

प्रकाशन विभाग

- बसोहली पेंटिंग (एम.एस. रंधावा)
- बुद्धिस्ट स्कल्पचर्स एंड मानुमेंट्स - (प्रकाशन विभाग)
- 5000 ईयर्स ऑफ़ इंडियन आर्किटेक्चर (प्रकाशन विभाग)
- फोक मेटल क्रॉफ्ट ऑफ़ ईस्टर्न इंडिया (मीरा मुखर्जी)
- इंडियन क्लासिकल डांस (कपिला वात्स्यायन)
- लिविंग डॉल्स : स्टोरी ऑफ़ इंडियन पपेट्स (जीवन पाणी)
- लुकिंग अगेन एट इंडियन आर्ट (विद्या देहेजिया)
- मधुबनी पेंटिंग (मुल्कराज़ आनंद)
- नटराजन इन आर्ट, थॉट एंड लिटरेचर (सी. शिवराममूर्ति)
- पैनोरमा ऑफ़ इंडियन पेंटिंग (प्रकाशन विभाग)
- सलेक्टेड सर्येआलिस्टिक पेंटिंग (नैशनल गैलरी ऑफ मॉडर्न आर्ट)
- सम आस्पेक्ट्स ऑफ़ इंडियन कल्चर (सी.शिवराममूर्ति)
- द आई इन आर्ट (डॉ. राजेंद्र वाजपेयी)
- वाल पेंटिंग ऑफ़ द वेस्टर्न हिमालयाज़ (मीरा सेठ)
- डांस लिगेसी ऑफ़ पाटलिपुत्र (शोभना नारायण)
- इंडियन सिनेमा - ए वीजुअल वोयेग (नेशनल फ़िल्म डेवलेपमेंट कॉरपोरेशन)
- इंडियन क्लासिक्स - मलयालम (जी.एस. अय्यर)
- भारतीय मुसलमान : त्योहार और प्रथाएँ (डॉ. माजदा असद)
- म्यूजिकल इंस्ट्रूमेंट्स ऑफ़ इंडिया (एस. कृष्णास्वामी)
- द लैंग्वेज ऑफ़ म्यूजिक (वी.के. नारायण मेनन)
- डॉक्यूमेंट्री फ़िल्म्स एंड इंडियन अवेकिंग (जगमोहन)
- फिल्म्स डिवीजन एंड दि इंडियन डॉक्यूमेंट्री (संजीव नारवेकर)

रिपोर्ट्स

यशपाल समिति रिपोर्ट 1993
कोठारी आयोग रिपोर्ट 1966
माध्यमिक शिक्षा आयोग की रिपोर्ट 1952-53
कला शिक्षा में सुधार पर बनी एन.सी.ई.आर.टी. कमेटी (1966) की रिपोर्ट

संदर्भ

- शिक्षा बिना बोझ के
- विद्यालयी शिक्षा के लिए राष्ट्रीय पाठ्यचर्या की रूपरेखा 1975
- विद्यालयी शिक्षा के लिए राष्ट्रीय पाठ्यचर्या की रूपरेखा 1988
- विद्यालयी शिक्षा के लिए राष्ट्रीय पाठ्यचर्या की रूपरेखा 2000
- राष्ट्रीय शिक्षानीति 1986
- राष्ट्रीय शिक्षा नीति की कार्यान्वयन योजना 1992
- ए प्रैक्टिकल गाइड फॉर टीचिंग, के-12, विजुअल आर्ट्स, संपादन जॉन ए. मिशेल 1993
- डिजाइन फॉर लर्निंग थ्रू द आर्ट्स, प्रभा सहासबुद्धे, आई.आई.सी. एशिया में पर्चे की प्रस्तुति, प्रोजेक्ट-यूनेस्को एंड सेंटर फॉर इंटरनेशनल आर्ट एजुकेशन सिंपोजियम आई.आई.सी., नयी दिल्ली।